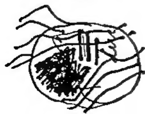
एक चोरी यह भी



एक चोरी यह भी

आकाश सेठी



हिन्दी अकादमी, दिल्ली के सौजन्य से प्रकाशित

नाटक के संदर्भ में !

श्री आकाश सेठी युवा नाटककारों में अपनी एक विशिष्ट पहचान बना रहे हैं। अपने विद्यार्थी जीवन से ही नाट्य-लेखन, अभिनय और निर्देशन में आकाश सेठी की विशिष्ट रूचि रही है। आपका एक व्यंग्य-एकांकी "चक्कर एक कुर्सी का" 'वीणा' मासिक में पिछले दिनों प्रकाशित हुआ।

"एक चोरी यह भी"—आकाश सेठी की एक सद्य-प्रकाशित नाट्य कृति है। यह रचना जीवन की वर्तमान विसंगतियों पर एक तेज-तर्रार व्यंग्य है। सम्वेदनशील कलाकार की वेदना और विवशता से उत्पन्न मानसिकता का मार्मिक निरूपण इस नाटक में हुआ है। वर्तमान समाज में रचनाकार की दयनीय स्थिति तथा उसकी अस्मिता के संकट को तटस्थ शिल्पी के रूप में इस रचना में उभारा गया है। इस उपभोक्ता संस्कृति में पिस रहे रचनाकारों की प्रतिभा किस प्रकार प्रकाश में आने से पूर्व ही अन्धकार के गर्त में ग़र्क हो जाती है, उसके सपने टूटते नज़र आते है, पर वह अपने इन सपनों का दामन नहीं छोड़ता और सतत रचना-कर्म में संलग्न रहता है। वह जूझता है और जीता है। इन संदर्भों में यह नाट्य-कृति वर्तमान तथाकथित संभ्रांत-वर्ग और बुर्जुवा लोगों के लिए एक प्रामाणिक और विचारोत्तेजक दस्तावेज़ है। रचनाकारों के बिना यह समाज चर्मरा जाएगा। यह नाट्य-कृति इस एहसास को उजागर करने में सक्षम है।

नाटक का नायक नरेन्द्र युवा-कवि है। जीवन की विवशताओं ने उसे 'आइडिया मास्टर' बना दिया। उसके जीवन का एकमात्र मिशन अपनी कवितायें प्रकाशित करवाना है, किन्तु उसकी यह साध अधूरी ही रहती है। उसे इस बात का भरपूर विश्वास है कि उसकी कविताओं में क्रांति की

अपूर्व क्षमता है। तभी एक दुर्घटना घटती है और उसकी कविता की फ़ाइल की चोरी उसका खाना, पीना और जीना दूभर कर देती है। उसे लगने लगता है कि जैसे उसका सर्वस्व लुट गया हो। वह राजनेता 'बिहारीलाल' को भाषण लिखकर देने से मना कर देता है, उद्योग-पति 'हरिराम' के विज्ञापन लिखने की योजना स्थगित कर देता है। उसकी पीड़ा एक सम्वेदनशील कवि की वेदना है। वह अनायास सोचता है :—"कैसे लिख सकता हूँ मैं बिहारीलाल के लिए भाषण, इस दिमाग़ी हालत में ?··· या फिर कोई साबुन बेचने का आइडिया, हरिराम के लिए !"···बहुत कुछ जो मुझ में था कभी, मर गया इस दौरान !···फिर भी एक चीज बच गई किसी तरह। वह था एक सपना, एक कवि के रूप में प्रसिद्ध होने का सपना।"

इस विषम स्थिति से साक्षात्कार इस नाट्यकृति का मूल मुद्दा है। इस प्रकार इस रचना का कथ्य हमारे जीवन की विद्रूपताओं, विसंगतियों और विरोधाभासों को रेखांकित करता है। इस की भाषा का प्रवाह और कथ्य में निहित व्यंग्य हमें आकर्षित करता है। उसकी तेजी कहीं अन्दर तक छू जाती है। ऐसा लगता है कि आधुनिक जीवन की विभीषिकाओं का चित्रण समकालीन संदर्भों में करते हुए नाटककार आज की व्यंग्य-मुद्रा को सहज रूप में अपनाता हुआ अपने नाटक और उसके संवादों को सशक्त रूप में सम्प्रेषित करता है। युवा नाटककार में अपने समय को देखने और समझने की पैनी दृष्टि है और उसके नाट्यलोक के भविष्य में गहरी संभावनायें परिलक्षित होती है।

मैं आकाश सेठी को इस पुस्तक के लिए आशीर्वाद देता हूं और मुझे विश्वास है कि यह युवा नाटककार भविष्य में और भी सुष्ठु, प्रांजल और सशक्त नाट्य-कृतियां हिन्दी-जगत् को प्रदान करेगा।

(विष्णु प्रभाकर)

नाटक के पात्र

नरेन्द्र
विनय
बिहारी
हरिराम
दिवाकर
शीला
पप्पू
चुन्नू
दुलारे
सिपाही
इंस्पेक्टर
नर्स



सम्पर्क-सूत्र :

आकाश सेठी,
'आकाशदीप' 158-वैशाली
दिल्ली-110034
(दूरभाष : 7120199)

दृश्य-1

(नरेन्द्र के घर की बैठक। बिहारी और विनय बैठकर बातें कर रहे हैं।)

विनय: मेरे कहने का मतलब है कि मैंने अपने इस काम का सारा जिम्मा नरेन्द्र जी पर छोड़ रखा है। वही करता हूं, जो वह कहते हैं।

बिहारी: पर भाई विनय, एक तरफ तो तुम कहते हो कि अगर तुम प्रेम में असफल हुए तो आत्महत्या कर लोगे और दूसरी तरफ तुम्हारा एक-एक कदम नरेन्द्र का बताया हुआ होता है। उस पर इतना विश्वास है तुम्हें ?

विनय: हां, हां। जी, साफ़ सी बात है कि अभी तक जो भी, जितनी भी सफलता मिली है, सब उन्हीं के कारण मिली है, वरना मेरे अपने बस का तो कुछ भी नहीं था। (सोच कर झिझकते हुए) पहले भी दो बार…खुद ही…हें हें… कोशिश की पर…नहीं हुआ कुछ। इस बार भी नरेन्द्र जी के लिखवाए एक ख़त ने बचा लिया वरना तो…

बिहारी: (मुस्कराते हुए) हां, हां, तो फिर खुश तो हो न अब ?

हमें भी तो, भई, वताओ, कुछ···यानी नाम, पता···अ···हां···कुछ तो।

विनय : नहीं, बिहारी जो ! यह तो नरेन्द्र जी की पहली शिक्षा थी मुझे, कि किसी के सामने कोई जिक्र नहीं करूंगा इस वारे में। (रुक कर) हां, उनकी बात और है वह तो सब जानते हैं।

बिहारी : सब···मतलब सब कुछ···यानी सभी कुछ?

विनय : और नहीं तो क्या? (समझाते हुए) साहब, अगर मरीज डाक्टर को मर्ज का सारा अता-पता नहीं बताएगा तो डाक्टर इलाज कैसे करेगा?

बिहारी : (हंसते हुए) अच्छा, तो तुम से भी यही कह रखा है उसने। चलो, तुम्हारा तो फिर भी ठीक है पर, (आहिस्ता से) पर हमें जब पूरी बात बतानी पड़ती है तो दस बार सोचना पड़ता है। तुम तो समझते ही होगे?

विनय : नहीं, नहीं, इसमें सोचने की क्या बात है। वह किसी की बात थोड़े ही बताते हैं? अब···हरिराम जी के व्यापार की कौन सी बात उनसे छुपी है, पर वह किसी के सामने नहीं बोलते। हम लोगों के सामने भी नहीं।

बिहारी : (सिर हिलाते हुए) हां, हां, यह तो है। इसीलिए, मैं भी फ़िक्र नहीं करता और हमेशा अपने काम के लिए नरेन्द्र के पास ही आता हूं। वरना विद्याधर भी अपने को किसी से कम नहीं मानता। विरोधी तो उसके पक्के ही ग्राहक हैं।

(नरेन्द्र प्रवेश करता है)

नरेन्द्र : (बिहारी से) अरे विहारी लाल जी, क्या सुबह-सुबह बुरे नाम मुंह पर ला रहे हैं? जब तक हम और आप

एक-दूसरे के साथ हैं, विरोधी आपसे हारते रहेंगे और विद्याधर मुझ से नीचे रहेगा।

बिहारी : सो तो है नरेन्द्र, सो तो है। पर अभी तक चुनाव दूर हैं। तुम्हारे पास आज तो मैं पब्लिक के काम से आया था।

नरेन्द्र : पब्लिक यानी जनता, जिसके बनाए आप हैं और हम भी। कहिए तो क्या सेवा है ?

बिहारी : भाई, एक नाला है, बाज़ार के दूसरे छोर पर। उसका पुल पुराना हो गया था। टूटने वाला था। अर्ज़ी डाली थी ऊपर नया बनवाने के लिए। पिछले महीने मंज़ूर हो गई। दस तारीख़ को ठेका दे दिया। कल बनना शुरू होगा···तो फिर भाषण तो भई, देना ही पड़ेगा। लिख दो। पब्लिक खुश हो जाएगी।

नरेन्द्र : (मुस्कराते हुए) हां, हां, पब्लिक का ख़याल तो रखना ही पड़ता है। (बिहारी सिर हिलाकर हामी भरता है।)

नरेन्द्र : पहले तो पब्लिक मेरा लिखा भाषण आपके मुंह से सुन कर खुश होगी, फिर ठेकेदार का बनाया पुल देखकर खुश होगी, फिर पुल पर चलकर खुश होगी, यानी कुल मिलाकर बहुत खुश होगी और सारा सेहरा आपके सिर। मुबारक हो।

बिहारी : अरे, नहीं, नहीं। तुम्हारे बग़ैर हम क्या हैं ? तुम्हारा ही कमाल है कि लोग हमारी स्पीच पर इतनी तालियां बजाते हैं।

नरेन्द्र : जी, आप मुझे इतना समझते हैं, यही बहुत है, पर मैं यह कहना चाहता हूं कि इस भाषण से एक पुल का निर्माण शुरू होगा, जिसका ठेका आपने दिया है··· (रुक कर)

और वह ठेका देने में···कुछ न कुछ तो···तो फिर मेरा भी थोड़ा ख़याल अच्छी तरह रखें तो···क्यों ठीक है न ?

बिहारी : भई, पहले की बात और थी, नरेन्द्र ! आजकल बहुत सख़्ती चल रही है। कुछ नहीं मिलता। यही काफ़ी है कि काम कुछ हो जाता है, ज़ोर डालने से, वरना तो लोग यही कहेंगे न कि कुछ नहीं किया पांच सालों में; समझ रहे हो न ?

नरेन्द्र : हमेशा तो समझता आया हूं, पर आज कुछ समझ नहीं पा रहा हूं। (हैरान सा चेहरा बनाकर) कोई ठेका दे दिया आपने, बिना किसी शेयर, समझ तो नहीं आता ···पर हो सकता है। चलिए, मुझे नार्मल रेट ही दे दीजिएगा। (जल्दी से) परसों तक ज़रूर लिख दूंगा आपका भाषण।

बिहारी : (मुंह बना कर) पर मुहूर्त तो कल है।

नरेन्द्र : कल है ? (सोचते हुए) कल तक तो···क्या करूं अभी बहुत काम है और बीवी की तबीयत भी ठीक नहीं। उधर भी ध्यान देना पड़ रहा है। (घड़ी देखकर) ओह, एक मिनट। ज़रा उसे दवा देकर आया।

(नरेन्द्र उठकर जाने लगता है।)

बिहारी : (उठकर, नरेन्द्र का हाथ पकड़कर) अरे, सुनो तो। दवा दो मिनट बाद दे देना। (विनय की तरफ़ देखकर धीरे से) देखो, नरेन्द्र, तुम अपना स्पेशल रेट ले लो। कल सुबह तक काम कर देना। ऐसे तो ठीक है न ?

नरेन्द्र : पर आपको कोई शेयर तो मिला नहीं इस ठेके में ?

बिहारी : (अकड़ कर) तो क्या हुआ ? हम तुम्हें, फिर भी, नहीं

मना करेंगे स्पेशल रेट के लिए। तुम्हारा हक़ बनता है, मौक़ा देखते हुए। अब कल तक कर देना काम।

नरेन्द्र : वह तो मैं वैसे भी कर ही देता, चाहे मुझे सारी रात जागना पड़ता। आपका काम तो वैसे भी मैं प्राइरटी पर करता हूं।

बिहारी : भई, अब जिस पर मर्जी करना, पर कर देना सुबह तक, ज़रूर। सुबह दस बजे आ जाऊंगा अभ्यास करने, और पैसे भी ले आऊंगा (सोच कर) अब चलता हूं।

(बिहारी उठकर बाहर जाने लगता है। नरेन्द्र भी खड़ा हो जाता है।)

नरेन्द्र : (साथ चलते हुए) चलिए, आपको बाहर तक छोड़ दूं! वैसे…और कोई सेवा हो मेरे लायक…

(दोनों बाहर चले जाते हैं।)

विनय : (स्वगत) चले गए बिहारी लाल। अब करता हूं अपनी बात।

(नरेन्द्र प्रवेश करता है)

नरेन्द्र : (बैठते हुए) और सुनाओ भाई आशिक, कैसे हो?

विनय : (दुखी स्वर में) जी, ठीक हूं।

नरेन्द्र : ठीक हो, तो ऐसे बुझे-बुझे से क्यों हो?

विनय : सिर से पांव तक आग लगी हुई है और आपको मैं बुझा-बुझा नज़र आ रहा हूं।

नरेन्द्र : कब से लगी है यह आग?

विनय : (सिर झुकाकर) दो दिन से। (सिर उठाकर नरेन्द्र की ओर देखकर) पांच चक्कर लगा चुका हूं आपके घर के और आप है कि अब मिले है।

नरेन्द्र : (सिर हिलाकर) 'हूं, दो दिन से आग लगी हुई है। फिर तो मेरा अंदाजा ठीक ही है। मान जाओ, अब बुझे ही हो।

दो दिन में राख हो चुके हो पूरे। क्यों?

विनय : जी, मानता हूं आपकी बात, और कब नहीं मानी आपकी? पर अभी तो मेरी समस्या सुलझाइए।

नरेन्द्र : सुलझा देते हैं। बताओ, क्या कष्ट है तुम्हें?

विनय : जी एक लड़का है, गुंडा किस्म का। घर से निकलना मुश्किल कर दिया है उसने वीणा का। पीछा करता है उसका। हां, कहता कुछ नहीं उसे। परसों मुझे भी धमका गया कि मैं कभी वीणा के साथ न नजर आऊं वरना'''

नरेन्द्र : (विनय की बात काटते हुए) वरना वह तुम्हारी टांगें तोड़ देगा। यही न?

विनय : (चकित होकर) जी'''जी, पर आपको कैसे पता?

नरेन्द्र : एक्सपीरिएन्स, तजुर्बा। और क्या? (गर्व से) भई, हम भी गुजर चुके हैं इस स्थिति से।

विनय : तो क्या आप भी प्यार के चक्कर में पड़ चुके हैं? तैर चुके हैं इस समुद्र में?

नरेन्द्र : (हंसते हुए) हां भई, तैर चुके हैं और आख़िर डूब भी गए।

विनय : यानी असफलता?

नरेन्द्र : असफलता या सफलता, जो मर्जी कह लो। शादी हो गई उसी लड़की से'''तुम्हारी भाभी से। पर पापड़ बहुत बेलने पड़े इसके लिए। उस सबके सामने तुम्हारी यह समस्या तो कुछ भी नहीं। अभी सुलझी समझो।

विनय : (खुश होकर) अच्छा। तो फिर बताइये क्या करूं मैं?

नरेन्द्र : वह लड़का तुम्हारी टांगें तोड़ने की धमकी देता है न?

विनय : (सिर हिलाकर) जी।

नरेन्द्र : तो अब दो रास्ते हैं। एक आसान है, पर उसका कोई लाभ नहीं। दूसरा कठिन है, परन्तु वह तुम्हें प्रेम की

मंज़िल तक ले जाएगा। कहो, कौन सा बताऊं ?

विनय : जो आप ठीक समझें।

नरेन्द्र : भई, हम तो सिर्फ़ रास्ता दिखा सकते हैं। चलना तो तुम्हें ही है। दोनों सुन लो।

(विनय ध्यान से सुनता है।)

नरेन्द्र : (रुककर) हां, पहला रास्ता तो यह है कि मैं बिहारी जी के कुछ आदमियों को भिजवा कर उस लड़के को पिटवा देता हूं। उसकी ऐसी दुर्गत हो जाएगी कि दुबारा कभी तुम्हारे सामने नहीं आएगा।

विनय : (उचक कर) हां, हां, यही ठीक रहेगा। करवा दीजिए ऐसा। मैं आपको कल ही रुपये ला दूंगा।

नरेन्द्र : (सिर हिलाते हुए) यहीं तो अपना बचपना दिखा जातेहो तुम। यह रास्ता आसान है पर इसमें कोई फ़ायदा नहीं बल्कि घाटा भी हो सकता है।

विनय : वह कैसे ? बस…वह लड़का पिट जाएगा और मेरा रास्ता छोड़ देगा। और क्या चाहिए ?

नरेन्द्र : देखो, तुम यह सब झमेला वीणा को पाने के लिए कर रहे हो न ? अब अगर वीणा को पता चल गया कि तुम ने उस लड़के को पिटवा दिया, तो हो सकता है कि वीणा को उससे सहानुभूति हो जाए और तुम वीणा की नज़रों में गिर जाओ। भई, ये लड़कियां ऐसी ही होती हैं।

विनय : नहीं, नहीं, ऐसा नहीं होना चाहिए। आप दूसरा रास्ता ही बताइये।

नरेन्द्र : हां, तो दूसरा रास्ता यह है कि तुम धमकियों की परवाह किए बग़ैर वीणा से मिलते रहो। इससे क्या होगा कि…

विनय : (घबरा कर) वह मेरी टांगें तोड़ देगा। क्या बात कर रहे हैं आप ?

नरेन्द्र : यही तो होना चाहिए। देखो, वह लड़का तुम्हें पीटेगा और वीणा को पता चलेगा तो उसके दिल में उस लड़के के लिए नफ़रत भर जाएगी और तुम्हारे लिए प्यार ही प्यार। क्या तुम नहीं चाहते ऐसा हो ?

विनय : (झिझकते हुए) जी, चाहता तो हूं···पर मार खाना ? ···कोई और रास्ता नहीं है क्या ?

नरेन्द्र : भई, मेरी नज़र में तो यही सबसे बढ़िया रास्ता है। मेरा तजुर्बा यही कहता है। (सोचकर) जानते हो, एक बार मुझे चोट लग गई थी, साइकिल से गिरकर। तुम्हारी भाभी मुझे देखकर रो पड़ी थीं और तभी से हमारा प्यार इतना बढ़ा कि बस···और तुम तो पिटोगे, वह भी वीणा की खातिर। हां, बाद में हम उस लड़के को भी पिटवा देंगे। बदला हो जाएगा और हीरोइन मिल जाएगी हीरो को, यानी तुम्हें।

विनय : (निश्वास छोड़ते हुए) ठीक है, नरेन्द्र जी। आपके कहने पर चल ही रहा हूं तो यह भी करके देख लेता हूं। आगे जो होगा देखा जाएगा।

नरेन्द्र : अरे, होगा क्या ? वही होगा, जो मैं कह रहा हूं। हरिराम भी अपना ही आदमी है। उसे तो मैं मना ही लूंगा। तुम बस एक बार अच्छी तरह वीणा के दिल में जगह बना लो।

विनय : ठीक है, पिट जाता हूं आपके कहने पर। बस, आप हरिराम जी को ज़रा···

(दरवाज़े पर दस्तक की आवाज़)

नरेन्द्र : कौन है ?

हरिराम : मैं हूं भाई, हरिराम। आइडियों मास्टर जी, दरवाजा तो खोलो।

(नरेन्द्र उठकर दरवाजे की ओर बढ़ता है)

विनय : (घबरा कर) अच्छा, नरेन्द्र जी···मैं चलता हूं। आपने जो कहा है, वही कर लेता हूं। नमस्ते।

(नरेन्द्र मुस्कराता है, फिर दरवाजा खोलता है। विनय तेजी से बाहर निकल जाता है और हरिराम उसे घूरते हुए अन्दर आता है।)

नरेन्द्र : आइये, हरिराम जी। कैसे आना हुआ ?

हरिराम : जी, वैसे ही जैसे हमेशा होता है। पर एक बात बताइये। आप इस लड़के को क्यों मुंह लगाते हैं ? इसका चाल-चलन ठीक नहीं है। मैं नहीं, सारा शहर जानता है। भगवान बचाए ऐसे लड़कों से।

नरेन्द्र : हरिराम जी, क्यों बुरा कहते हैं उस बेचारे को ? सीधा लड़का है।

हरिराम : (ठुनक कर) काहे का सीधा जी ? कोई लड़की है शहर में जिस पर बुरी नजर न डाली हो इसने ? कई बार बचा है, पिटते-पिटते।

नरेन्द्र : (स्वगत) अब नहीं बचेगा, (हरिराम से) जी, यह तो जोश है जवानी का। वैसे लड़का अच्छा है।

हरिराम : ठीक है जी, होगा आपकी नजर में अच्छा। हम तो नहीं मानते।

नरेन्द्र : (मुस्कराते हुए) मत मानिए, वल्कि गोली मारिए, मैं कहता हूं। आप सेवा बताइये मेरे लायक।

हरिराम : (गहरी सांस लेकर) आपके ही लायक है जी। हमारे वस की होती तो आते ही क्यों आपके पास ?

नरेन्द्र : नहीं साहब, आप ही सब करने लगेंगे, तो हम तो बेकार

हो जाएंगे। क्यों ? कहिए क्या ख़िदमत करूं ?

हरिराम : (सोचकर) साबुन की फैक्ट्री है न जी, मेरी एक, रेलवे लाइन के पास। अरे, वहीं, चौकी से इधर को हटके। (नरेन्द्र सिर हिलाकर हामी भरता है।) अच्छी भली चल रही थी। माल बनाते थे। सप्लाई कर देते थे 'जगमग' वालों को। परसों लाला आया था कहने कि अब और नहीं चाहिए। बेचना मुश्किल हो गया है, अपना ही माल नहीं बिकता। लाख कहा उससे कि भाई थोड़ा कम रेट दे दे पर नहीं माना, तो बस नहीं माना। अब आप बताओ। मैं कहां जाऊं, रोज का दस टन साबुन बेचने ?

नरेन्द्र : हरिराम जी, अब तक तो बिकता ही रहा है न, चाहे 'जगमग' के नाम से ही सही। अब ख़ुद पैक करके बेच दिया करो।

हरिराम : मास्टर जी, पैक तो चलो हो जाएगा, लेकिन···बिकेगा कैसे ?

नरेन्द्र : अजी, बिकेगा 'चकमक' के नाम से

हरिराम : (हैरान होकर) 'चकमक'···यह 'चकमक' कौन सी कम्पनी बनाती है ?···और वह कम्पनी मेरा साबुन भला क्यों खरीदेगी ?

नरेन्द्र : (हंसते हुए) हरिराम जी, 'चकमक' बनाएगी आपकी कम्पनी और साबुन बिकेगा धड़ाधड़।

हरिराम : (मुंह बनाकर) यह नहीं हो सकता अपने से, आइडिया मास्टर जी। आप कोई और तिकड़म बताओ।

नरेन्द्र : होगा कैसे नहीं आपसे जब हम करवाएंगे ?

हरिराम : (खुश होकर) यानी वही, चाय पत्ती वाला आइडिया। (सोचकर) लेकिन मास्टर जी, वह तो 50-60 हज़ार

का ही चक्कर था। यह तो लाखों का मामला है। ख़तरा हैं बहुत।

नरेन्द्र : बस, जैसे वह चक्कर चल गया था, वैसे ही यह लाखों का मामला भी चल निकलेगा। आइडिया मैं आपको कल दे दूंगा। आप शहर की सारी दीवारें काली करवा देना और जहां-जहां 'जगमग' के इश्तिहार हैं, उनके नज़दीक तो ज़रूर। बस, फिर देखना।

हरिराम : नहीं…वह तो मैं करवा ही दूंगा, पर आप आइडिया का…नमूना तो बताओ कोई।

नरेन्द्र : नमूना ? जैसे…जैसे…(सोचकर) जैसे जगमग की जगमग से बढ़कर जगमग, और कपड़ों में ज्यादा चमक, ख़रीदो साबुन चकमक। (अकड़कर) क्यों ? कैसा है ?

हरिराम : (खुश होकर) वाह। बहुत बढ़िया है। (सोचते हुए) पर लोगों से ज्यादा चक्कर तो दुकानदारों का है। उन्हें कौन मनाएगा माल उठाने के लिए ?

नरेन्द्र : हां, यह तो है, लेकिन घबराने की क्या बात है ? बस, आप कुछ दिनों के लिए दस-बारह लड़के-लड़कियां रख लीजिए, घर-घर जाकर साबुन बेचने के लिए, यही ज्यादा से ज्यादा… एक महीने के लिए। फिर हम… बिहारी जी से कहकर, 'जगमग' की फैक्ट्री में यूनियनबाजी से हड़ताल करवा देंगे। साले दुकानदारों को उठाना ही पड़ेगा आपका माल। अब कोई तीसरी फैक्ट्री तो है नहीं शहर में।

हरिराम : (हर्षित होकर) वाह। मास्टर जी, क्या आइडिया निकाला है, आइडियों में से ढूंढ़कर। जवाब नहीं आपका। कमाल का आइडिया है।

नरेन्द्र : हें, हें, हरिराम जी, मैं तो हूं ही इसीलिए कि आपकी

सेवा इसी तरह करता रहूं। बस, आप भी थोड़ा बहुत ख़्याल रखिएगा मेरा।

हरिराम : अरे बोलो, मास्टर जी, आप खुद ही बोलो। कितना ध्यान रखें आपका? कितना चाहिए आपको, साफ़-साफ़ लफ़्ज़ों में?

नरेन्द्र : बस, यही थोड़ा बहुत···जितना आपके पास आता रहे, उसका छोटा सा हिस्सा·· यही कोई रुपए में एक पैसा, और क्या? ज्यादा तो, आप जानते हैं कि मैं मांगता नहीं। हें-हें···ठीक है न?

हरिराम : ठीक है जी, इसमें क्या है? आपके किए का इतना तो देना बनता ही है। आप जरा विहारी जी को पक्का कर दीजिएगा···वह हड़ताल वग़ैरह के लिए।

नरेन्द्र : हां, हां, मैं बात कर लूंगा। पूछ भी लूंगा कि कितना एक खर्च होगा इस पर? बाकी·· अगर ज़रूरत पड़ी तो लाला पर एक-आध छापा भी डलवा देंगे···इन्कम-टैक्स वालों का।

हरिराम : हां जी, जो ज़रूरत हो, आप करवा ही देंगे। जी, पूरा विश्वास है मुझे, मास्टर जी, आप पर। बस, खर्च पूछ लेना आप विहारी जी से·· हें-हें···ज़रा ठीक से। हैं जी, हम तो, मास्टर जी, आपके ही आदमी हैं शुरू के। हैं···

नरेन्द्र : क्यों नहीं, क्यों नहीं? यह तो मैं कर ही दूंगा। यह सब तो आप मुझ पर ही छोड़ दीजिए। (रुककर) और सुनाइये, अभी पहले आप क्या कह रहे थे···(सोचकर) ···विनय के बारे में?

हरिराम : (तैश में आकर) अरे वही जो हमेशा कहता हूं। बहुत बुरा लड़का है, एकदम निकम्मा और ऊपर से आवारा। यह मत सोचना कि मैं यह इसलिए कह रहा हूं कि

उसका बाप मेरे मुकाबले में धंधा करता है। वह लड़का, सच में, है ही ऐसा।

नरेन्द्र : नहीं, हरिराम जी। वह बुरा नहीं है। थोड़ा-बहुत उम्र का असर जरूर है, पर दिल का सच्चा है।

हरिराम : अजी, काहे का सच्चा, मास्टर जी? (धीमी आवाज में) मुझे पीछे शक पड़ गया था कि इस कमीने की वीणा पर बुरी नजर है। मैं भी फिर, आप जानते हैं, पूरा बुरा हूं, बुरे के साथ। बस, एक पट्ठे से धमकी दिला दी कि कभी इस ओर रुख किया तो टांगें तुड़वा दूंगा। अब नहीं डोलता मेरी गली के आसपास कभी।

नरेन्द्र : ऐसी तो कोई बात नहीं थी कि आप उस बेचारे को डराते। वह वैसे ही कभी किसी दोस्त से मिलने आया होगा आप के घर के आसपास। उसके दिल में कोई बुराई नहीं। आपने व्यर्थ ही डरा दिया।

हरिराम : (गुस्से से) आइडिया मास्टर जी, देखो आप बहुत समझदार आदमी हैं पर आपकी यह बात मैं नहीं मान सकता। मेरा···मेरा दिल कहता है कि वह बुरा लड़का है और···(अटकने के बाद तेजी से) मुझे कभी अच्छा नहीं लग सकता, बस।

नरेन्द्र : चलिए, जाने दीजिए। हम दो समझदार भाई क्यों एक आवारा लड़के के लिए यूं बहस करें? जैसा भी हो, हमें क्या? (सोचते हुए) मैं तो उसे इसलिए भला समझता था कि आते-जाते मुझे हाथ जोड़कर नमस्ते कर देता है, पर जब आप कहते हैं तो ठीक···ही···कहते···बाकी हमें क्या पता, और पता करके लेना भी क्या?

हरिराम : हां जी। यह तो है ही। आप भी कैसे जान सकते हैं? अब आदमी किसी के अन्दर तो झांक नहीं सकता जी।

छोड़ो, हमें क्या ? अच्छा, अब चलता हूं।

नरेन्द्र : चलिए फिर आप। मैं भी बैठकर आप का काम करता हूं। और कोई सेवा हो तो बताइए।

हरिराम : हें हें हें···जो बस मास्टर जो अभी तो बस यही काम था आप से। तो मैं कल शाम को आ जाऊं?

नरेन्द्र : ज़रूर-ज़रूर, आपके लिए पूरी योजना तैयार रखूंगा, नमस्ते !

हरिराम : जै राम जी की। (बाहर चला जाता है)

(नरेन्द्र दरवाज़ा बन्द करके, गुनगुनाते हुए अन्दर की तरफ़ आता है।)

नरेन्द्र : क्यों भई शीला, खाना तैयार है क्या ?



दृश्य-2

(नरेन्द्र का शयन-कक्ष। नरेन्द्र और पप्पू बिस्तर पर बैठे हैं और शीला इधर-उधर चलते हुए चीज़ें समेट रही है।)

नरेन्द्र : तो पप्पू, तुम्हारे बीस में से अठारह नम्बर आए। शाबाश ! मेरा बेटा बहुत मेहनती है। शुक्र है शीला, यह तुम पर नहीं गया।

शीला : (रुककर गुस्से से) क्यों, और किस पर गया है ? तुम्हें तो पिछले दस साल में मैंने क़भी मेहनत करते देखा नहीं और उससे पहले भी कहां करते होंगे ?

नरेन्द्र : अरे, जाने दो, जाने दो। हमने अपने छात्र-जीवन में जितनी मेहनत की है, उतनी कोई क्या करेगा ?

शीला : (भुनक कर) मालूम है, वह भी सब। भाई साहब से सुन चुकी हूं तुम्हारे उस दौर की कहानी भी। (मुंह बनाकर) मेहनत की है। हुंह।

नरेन्द्र : ठीक है; ठीक है, घर की मुर्गी दाल बराबर। कोई है पूरे परिवार में मेरे जितना पढ़ा-लिखा ? (अकड़कर) एम० ए० की है मैंने और भाई साहब खुद बी० ए० भी नहीं।

बातें करते हैं बड़ी-बड़ी।

शीला : चलो ठीक है। पर अब दुबारा मत शुरू कर बैठना अपनी कामयाबियों की कहानी, पचास बार सुन चुकी हूं।

नरेन्द्र : तुम्हें सुनाता ही कौन है ? पर, उन्हीं कामयाबियों के कारण आज यह घर है, सारे आराम हैं तुम्हें। वरना रहते तीनों भाइयों के साथ उसी दड़बे में।

शीला : बार-बार अहसान मत जताया करो इस घर का। अकेली नहीं रहती मैं यहां। आप भी रहते हैं और बच्चे भी।

नरेन्द्र : हां, हां, ठीक है। अब कौन तुम से बहस करे ? (पप्पू से) बेटे आओ, तुम्हें एक बहुत बढ़िया कविता सुनाऊं—

पप्पू : (बात काटते हुए) पिता जी, यह आपने एम० ए० में लिखी थी ?

नरेन्द्र : (चकित होकर) हां···हां बेटे, पर तुम्हें कैसे पता ?

पप्पू : आप जो भी कविता सुनाते हैं वह एम० ए० में ही लिखी हुई होती है। आप अब तो कोई कविता लिखते ही नहीं।

नरेन्द्र : बेटे, अब मुझे तुम सब के लिए पैसे कमाने के लिए भाषण, इश्तिहार और···और न जाने क्या-क्या लिखना पड़ता है। कविता लिखने का मूड ही नहीं बनता। (एक फाइल सिरहाने के पास से उठाते हुए) बस इस फाइल में जो कुछ है, इसी से एक दिन लोग मुझे बहुत बड़ा कवि मानेंगे।

पप्पू : वह कैसे पिता जी ?

नरेन्द्र (सोचते हुए) जब मेरे पास काफ़ी पैसा जमा हो जाएगा तो मैं इन कविताओं को छपवाऊंगा और बड़े-बड़े

आलोचकों से इनकी प्रशंसा करवाऊंगा। 'पद्य'
(चुन्नू प्रवेश करता है और आकर दरवाज़े के पास हो जाता है)

चुन्नू : पिता जी, क्या करवाएंगे ?

नरेन्द्र : (चुन्नू को देखकर) प्रशंसा, चुन्नू बेटे।

चुन्नू : (हैरान मुद्रा से) यह प्रशंसा क्या होती है ?

नरेन्द्र : तारीफ़ ''जैसे ' जैसे मैं कहूं कि मेरा चुन्नू बेटा बहुत अच्छा है, तो वह प्रशंसा होती है।

चुन्नू : पर आप तो कभी प्रशंसा करते ही नहीं। हमेशा कहते हैं कि चुन्नू तो बहुत शरारती है, चुन्नू बहुत गंदा है। (सोचकर) पिता जी, यह क्या होता है ?

नरेन्द्र : बेटे, यह प्यार होता है। मैं तुम से बहुत प्यार करता हूं न। आओ, तुम्हें एक कविता सुनाऊं। (हाथ से संकेत करके) आओ, यहां आकर बैठो।

चुन्नू : (सिर हिलाते हुए, उदास भाव से) नहीं पिता जी, मुझे होम-वर्क करना है।

नरेन्द्र : (समझाते हुए) बाद में कर लेना बेटे, पहले कविता तो सुन लो।

चुन्नू : (आंख मलते हुए) पिता जी, मुझे नींद भी आ रही है।

नरेन्द्र : बात मानते है, बेटा।

चुन्नू : देखिए पिता जी या तो मैं कविता सुन सकता हूं या होम-वर्क कर सकता हूं। उसके बाद मुझे नींद आ जाएगी।

नरेन्द्र : चुन्नू, तुम बहुत ज़िद करते हो। चलो पहले कविता सुन लो, फिर पप्पू तुम्हें होम-वर्क करवा देगा। (पप्पू से) क्यों पप्पू, ठीक है न ?

चुन्नू : पर पिता जी···

नरेन्द्र : अरे, बैठो तो। (उठकर चुन्नू को बांह से पकड़ कर अपने पास बैठा लेता है) अरे हां, शीला, आओ भई तुम भी कविता सुनो। फाइल खोलता है। (कुछ पन्ने पलट कर) हां, यह। क्या कविता है वाह! शीला सुनो, कितना जोश है इसमें?

शीला : (पास आकर बैठती है; उबासी लेते हुए) यही वक्त मिलता है तुम्हें मुझे जोश दिलाने का? चलो सुनाओ, सोऊं फिर। ऐसे तो तुम सोने दोगे नहीं, बिना कविता सुनाए। चलो, जल्दी करो।

नरेन्द्र : (परेशान होकर) कैसे बोलती हो? मूड बिगाड़ कर रख दिया। चलो, ख़ैर कोई बात नहीं। सुनो। (पढ़ते हुए) हूं'''बदल देना है इस ज़माने को मुझे'''

दृश्य-3

(नरेन्द्र का शयन-कक्ष। नरेन्द्र सो रहा है। शीला हाथ में चाय का कप लिए प्रवेश करती है।)

शीला : (नरेन्द्र को झंझोड़ कर) अजी उठिए, आज सोते ही रहना है···क्या?

नरेन्द्र : ऊंहूं, सोने दो, भई। रात दो बजे तक जागता रहा हूं, भाषण के चक्कर में।

शीला : अब आठ बज रहे हैं। उठो, चाय पी लो।

नरेन्द्र : (शीला की ओर देखकर) क्या आठ बज गए? (उठते हुए) लाओ, चाय दो। वह बिहारी भी आता होगा। बैठकर बूढ़े तोते को पाठ रटाना पड़ेगा। यह पैसा कमाना भी बहुत मुश्किल काम है। जिस आदमी को अपना नाम तक नहीं लिखना आता, उसे बड़े-बड़े उपदेश रटाने पड़ते हैं। (तकिए के पास देखकर) तुमने मेरी फाइल और भाषण वाले कागज उठाकर कहां रख दिए हैं?

शीला : वह कागज तो मैंने तुम्हारी मेज पर रख दिए थे। पर फाइल यहां नहीं देखी मैंने। तुमने शायद रात को ही

अलमारी में रख दी होगी।

नरेन्द्र : (चाय का कप रखते हुए) अरे, कहां रखी मैंने? यहीं थी वह भी। देखो अलमारी में।

शीला : (झुंझला कर) देखती हूं, देखती हूं। तुम्हें तो ज़रा देर फाइल न दिखे तो तुम शोर मचा देते हो। ऐसा कौन सा खज़ाना है जो कोई उठा कर ले जाएगा। यहीं कहीं होगी।

(शीला उठती है अलमारी खोलकर देखती है)

शीला : अलमारी में तो नहीं है। तुमने कहीं और रखी होगी।

नरेन्द्र : (उठते हुए) कहां और रख दी होगी? बेवकूफ़ों जैसी बात मत किया करो (शीला को हटाते हुए) हटो, मैं देखता हूं अलमारी में।

(नरेन्द्र अलमारी में से काग़ज़, कपड़े और किताबें निकाल कर फेंकता है।)

शीला : (परेशान होकर) ओफ्फोह्। क्यों कबाड़ फैला रहे हो? सफ़ाई तो बाद में मुझे ही करनी पड़ेगी। भई, मैं देख चुकी हूं अलमारी में अच्छी तरह।

नरेन्द्र : (मुड़कर, शीला से) देख चुकी हो न तुम। अब मुझे देखने दो और तुम बाकी जगह देखो। समझी। तुम्हें क्या पता मेरे लिए उस फाइल की क्या कीमत है। वही एक चीज़ है जिसके कारण कल लोग मुझे याद करेंगे और तुम्हें···तुम्हें सफ़ाई की पड़ी है जाओ, ढूंढो उधर।

शीला : (मुंह बनाकर) अच्छा, देखती हूं। यही बात अगर प्यार से कह देते तो क्या फ़र्क पड़ता?

नरेन्द्र : (गुस्से से) फ़र्क यह पड़ता कि तुम्हारे पल्ले नहीं पड़ती। जाओ अब, देखो उधर और मुझे यहां ढूंढने दो।

(शीला बाहर चली जाती है और नरेन्द्र पूर्ववत् चीजें इधर-उधर फेंकता रहता है।)

शीला : (अन्दर आते हुए) मुझे तो नहीं मिली। तुम्हें मिली क्या ?

नरेन्द्र . (गुस्से से) नहीं, नहीं, नहीं। अगर मिल गई होती तो अभी तक यूं ही झक क्यों मार रहा होता ? कोई और काम नहीं करता ? तुम ने दूसरे कमरे में देख लिया है ?

शीला : हां, हां, देख तो लिया है, पर फ़ाइल वहां है ही नहीं।

नरेन्द्र : तो कहां गई फिर ?

शीला : मुझे क्या मालूम ?

नरेन्द्र : चलो, मैं देखता हूं दूसरे कमरे में; आओ।

शीला : आप विश्वास तो करते नहीं। मैं अपनी तरफ़ से अच्छी तरह देख चुकी हूं। आप जाकर देख लीजिए। जब नहीं है तो…

नरेन्द्र : अच्छा, मुझे देख लेने दो। मत आओ साथ।

(नरेन्द्र बाहर चला जाता है।)

शीला : (सोचते हुए) कहां गई होगी ? सारे घर में ढूंढ लिया। कहीं नहीं है। चोरी हो गई ? पर कोई और चीज़ भी तो ग़ायब नहीं है घर की। कहां गई ? (बैठ जाती है।)

(नरेन्द्र प्रवेश करता है।)

नरेन्द्र : वहां तो सचमुच नहो है।

शीला : तो मैं भी तो यही कह रही थी। पर…गई कहां ? अगर घर में नहीं है तो…कौन ले गया ?

नरेन्द्र : यही तो मैं भी सोच रहा हूं। हो सकता है कि हम लोगों के सोने के बाद कोई चोर…घर का बाकी सामान तो ठीक-ठाक है न ? गहने, पैसे वग़ैरह…

शीला : हां-हां, वह तो सब है। बस, तुम्हारी फ़ाइल ही ग़ायब हुई है।

नरेन्द्र : (सोचते हुए) इसका मतलब···कोई सिर्फ़ मेरी फ़ाइल चुराने के इरादे से ही चोरी करने आया था। पर··· किसी को मैंने कभी बताया ही नहीं इसके बारे में, तो कौन···

शीला : किसी को भी नहीं बताया? किसी को भी नहीं?

नरेन्द्र : हां-हां, घर के लोगों को छोड़कर, मैंने किसी से बात ही नहीं की, इसके बारे में।

शीला : सोचो, शायद कभी किसी से बात की हो।

नरेन्द्र : (माथे पर हाथ रख कर) मुझे याद तो नहीं आता। हूं··· हां, एक दफ़े, हां एक दफ़े मैंने बिहारी से ज़िक्र किया था कि अगर वह मुझे सरकार से कुछ पैसा दिला दे तो मैं अपनी कविताएं छपवा दूं, पर बात आई-गई हो गई थी। अब तो उसे याद भी नहीं होगा और उसने किसी और से भी नहीं कहा होगा।

शीला : लेकिन हो सकता है, उन्हें याद रह गया हो। तुम्हारी आजकल उनसे कैसी चल रही है? कहीं कोई ऐसी-वैसी बात तो नहीं हुई?

नरेन्द्र : (सिर हिला कर) नहीं तो···लेकिन हां, कल वह मुझे पैसे कम देने के चक्कर में था पर मैंने थोड़ा-बहुत नाटक करके उसे मना लिया, ठीक देने के लिए! बस, और तो कुछ नहीं।

शीला : शायद : इसी बात से नाराज़ हो गए हों। देखो, वह बड़े आदमी हैं। उन्हीं के कारण आज हम अच्छी हालत में हैं। हो सकता है, तुम्हारी इस बात का बुरा मान गए हों और···यह हो गया हो।

नरेन्द्र : वैसे ऐसा हो तो नहीं सकता पर बिहारी आदमी बहुत सिरफिरा है? किसी को अपने सामने नहीं टिकने देता।

शायद उसने यह करवा दिया हो।

शीला : तो अब क्या करोगे ?

नरेन्द्र : अगर तो यह विहारी का ही काम है तो हम कुछ नहीं कर सकते, उससे विनती करने के सिवा। उसके सामने तो पूरे शहर में किसी की नहीं चलती, मैं क्या बिगाड़ सकता हूं, उसका ?

शीला : *अभी वह आने वाले हैं न। तुम उनसे माफ़ी मांग लेना,* कल वाली बात के लिए। वह तुम्हें माफ़ कर ही देंगे। आख़िर इतने सालों से तुम उनके लिए काम कर रहे हो।

नरेन्द्र : (श्वास छोड़ते हुए) हां भई, पानी में रह कर मगर से वैर तो किया नहीं जा सकता। मैं तैयार हो जाता हूं। वह आने ही वाला होगा।

दृश्य-4

(नरेन्द्र की बैठक। नरेन्द्र बेचैनी से इधर-उधर टहल रहा है। दरवाज़े पर दस्तक की आवाज़ होती है। नरेन्द्र तेज़ी से दरवाज़े की तरफ बढ़ता है और मेज़ से टकरा कर गिरते-गिरते बचता है।)

नरेन्द्र : (दरवाज़ा खोलते हुए) कौन है?

बिहारी : मैं हूं, भई।

(नरेन्द्र दरवाज़ा खोलता है और बिहारी प्रवेश करता है।)

नरेन्द्र : आइये, बिहारी जी। मैं कब से आप ही का इंतजार कर रहा था।

बिहारी : पर मैंने तो तुम से दस बजे के लिए कहा था। (घड़ी देखते हुए) और अभी तो दस भी नहीं बजे।

नरेन्द्र : (घबराए स्वर में) हां···जी···वह मैं···मैं इसलिए इंतज़ार कर···इसलिए इंतजार कर रहा था कि···कि मेरी घड़ी शायद आगे चल रही है। इसमें साढ़े दस बज रहे हैं।

बिहारी : (बैठते हुए) अच्छा-अच्छा, कोई बात नहीं ख़ैर, होता है

ऐसा भी। हां, तुमने भाषण तो लिख लिया है ?

नरेन्द्र : जी हां, वह तो मैंने रात को ही लिख लिया था।

विहारी : (प्रसन्न होकर) ठीक है, तो फिर शुरू हो जाओ। कहां है तुम्हारा पर्चा ?

नरेन्द्र : वह...वह तो अन्दर रखा है। मैं अभी लाता हूं।

(नरेन्द्र अन्दर चला जाता है।)

विहारी : (स्वगत) यह नरेन्द्र को क्या हो गया है ? घबराया सा लग रहा है। पता नहीं, क्या बात है।

(नरेन्द्र हाथ में कागज लिए प्रवेश करता है।)

नरेन्द्र : हां जी, विहारी जी, शुरू करते हैं, पर...पर मुझे आपसे एक बात करनी थी।

विहारी : हां हां, कहो। वैसे मैं तुम्हारे रुपये ले आया हूं।

नरेन्द्र : नहीं, वह बात नहीं है। बात यह है कि...

बिहारी : अरे, बोलो तो सही क्या बात है ?

नरेन्द्र : जी, बात ऐसी थी कि...कि...कि मैं...आप...वह... मेरा मतलब आप मुझ से नाराज तो नहीं ?

बिहारी : (परेशान होकर) क्या बेहूदा बात कर रहे हो ? मैं क्यों तुम से नाराज होऊंगा ?

नरेन्द्र : जी, नहीं बस...वैसे ही...वैसे ही।

बिहारी : (गुस्से से) मैं तुम्हें पागल नजर आता हू, जो तुम से वैसे ही नाराज हो जाऊंगा ? भई, तुम मेरे पुराने साथी हो।

नरेन्द्र : जी नहीं, इसलिए नहीं, पर बात ऐसी है...कि...कि... कि मैं आप से इस भाषण के पैसे ही नहीं लूंगा।

बिहारी : क्या मतलब ? पैसे नहीं लोगे। क्यों नहीं लोगे ? क्या हो गया है तुम्हें ?

नरेन्द्र : नहीं, कुछ नहीं हुआ मुझे। पर मैंने यह सोचा कि मैं आपसे पैसे नहीं लूंगा और वह कल जो···नहीं, नहीं आप सच-सच बताइये···आप नाराज़ तो नहीं मुझ से ?

बिहारी : (खीझ कर) फिर वही बकवास शुरू कर दी तुमने। अब क्या मैं तुम्हें स्टाम्प पेपर पर लिख कर दूं कि मैं तुमसे नाराज नहीं हूं। (शांत स्वर में) नरेन्द्र, क्या हुआ है तुम्हें ? क्यों यह बेकार की बकबक कर रहे हो ?

(नरेन्द्र बिहारी के पांव पकड़ लेता है।)

नरेन्द्र : (गिड़गिड़ाते स्वर में) बिहारी जी, मैं आपके पांव की धूल हूं। आपका दास हूं। आज मैं जो भी हूं, आपका बनाया हुआ हूं। मेरी ग़लती माफ़ कर दीजिए। मैं अपनी औकात भूल गया था।

बिहारी : (हैरानी से आस-पास देखकर, नरेन्द्र को उठाते हुए) नरेन्द्र, नरेन्द्र, नरेन्द्र···

नरेन्द्र : (पांव पकड़े हुए) नहीं, मुझे माफ़ कर दीजिए। मैं कसम खाता हू कि आगे से कभी ऐसा नहीं होगा।

(बिहारी झटके से नरेन्द्र को उठाकर खड़ा कर देता है और कंधे से पकड़ कर हिलाता है।)

बिहारी : नरेन्द्र, होश में आओ। क्या हो गया है ? इस तरह माफ़ी मांगने की क्या ज़रूरत है ? आखिर क्या ग़लती की है तुमने ?

नरेन्द्र : जी, वह कल जो मैंने आपसे···वह स्पेशल रेट···स्पेशल रेट के लिए···वह जिद की थी। (फिर बिहारी के पांव पकड़ लेता है।) माफ़ कर दीजिए मुझे उसके लिए।

बिहारी : (मुस्कराते हुए) अच्छा-अच्छा, यह बात थी। (सोच कर) हां, कुछ बुरा तो मुझे लगा था उस वक्त, पर क्या है उसमें नाराज होने वाली बात ? मैं तो वैसे ही खुद ही

दे देता। इसमें ऐसी कोई बात नहीं।

नरेन्द्र : (उठते हुए) तो आपने मुझे माफ़ कर दिया ?

बिहारी : भई, जब मैं नाराज़ ही नहीं हुआ तो···माफ़ करने का सवाल ही नहीं पैदा होता।

नरेन्द्र : (हैरान होकर) फिर यह कैसे हो गया ?

बिहारी : क्या कैसे हो गया ?

नरेन्द्र : जी, वही···जो हुआ कल रात। पता नहीं, कैसे ?

बिहारी : (खीझ कर) पर हुआ क्या ?

नरेन्द्र : हं···हां। बिहारी जी, आपको याद होगा मैंने आपसे एक बार कहा था अपनी कविताओं के बारे में···वह सरकार से पैसा दिलाने के लिए···कविताएं छपवाने के लिए।

बिहारी : (याद करते हुए) हां,···कहा था शायद। कुछ याद तो आता है कि कहा था तुमने इस बारे में, लेकिन कल रात···

नरेन्द्र : जी, वे कविताएं जिस फ़ाइल में थी, वह फ़ाइल कल रात चोरी हो गई। (दुखी स्वर में) मैं लुट गया, बिहारी जी, मैं लुट गया। वे कविताएं···मेरी सारी ज़िन्दगी की कमाई थीं। उन्हें जब लोग पढ़ते तो जानते कि मेरे अन्दर कितना बड़ा कवि है। पर···अब क्या होगा ? आप बताइये मैं क्या करूं ? कहां ढूंढूं उस फाइल को ?

बिहारी : (नरेन्द्र के कंधे पर हाथ रख कर) ओ हो, यह तो बहुत बुरा हुआ। मैं ज़रूर कुछ करूंगा इस बारे में पर··· (उसके कंधे से हाथ हटा कर) आज तो जलसा है, मुझे भाषण देना है···और भी बहुत से काम हैं। आज तो भई,···मुश्किल है। हां, कल मैं···

नरेन्द्र : (बात काटते हुए) जी, कल तक बड़ी देर हो जाएगी। मेरी मेहनत लुट जाएगी। मेरी कविताएं···किसी और

के नाम से बाजार में छप कर आ जाएंगी। (रोते हुए) मैं बरबाद हो जाऊंगा। कुछ कीजिए, बिहारी जी, जल्दी कुछ कीजिए।

बिहारी : (सोचते हुए) हूं···तो कुछ करना पड़ेगा। तुम्हें मैं ऐसे नहीं बरबाद होने दूंगा। तुम···ऐसा करो कि···थाने जाकर रपट लिखवा दो। मैं घनश्याम को भेजकर शहर के पांचों प्रेसों को मना करवा देता हूं···ऐसा कुछ छापने के लिए। क्यों ठीक है ?

नरेन्द्र : जी, यही ठीक रहेगा। (तेजी से) मैं फिर जाता हूं··· पुलिस-स्टेशन आप भी चलिए मेरे साथ।

बिहारी : (गुस्से से) पागल हो गए हो क्या ? मालूम नहीं···मुझे अभी इतने काम करने हैं और जलसे में भी जाना है। तुम जल्दी मुझे प्रैक्टिस करवाओ और फिर तुम थाने चले जाना।

नरेन्द्र : (झेंपते हुए) जी···जी, ठीक है। मैं अभी आया।

(नरेन्द्र अन्दर जाता है।)

बिहारी : बेवकूफ···क्या बात करता है। हुंह।

(नरेन्द्र एक काग़ज़ थामे हुए प्रवेश करता है।)

(नरेन्द्र और बिहारी आमने-सामने बैठ जाते हैं।)

बिहारी : हां, भई शुरू करो।

नरेन्द्र : जी। (पढ़ते हुए) भाइयो और बहनो, मैं यहां आज इस नए पुल के निर्माण का उद्घाटन करने आया हूं।

बिहारी : चलो, यहां तक तो ठीक है। आगे बताओ।

नरेन्द्र : (आगे पढ़ता है) पुल सिर्फ ईंट, सीमेंट और लोहा नहीं होता। पुल एक संबंध होता है, पुल एक रिश्ता होता है। पुल देश की एकता का प्रतीक है। पुल···

बिहारी : (काटते हुए) देश की एकता का क्या है ?

नरेन्द्र : प्रतीक। प्रतीक है।

बिहारी : यह परतीक क्या होता है ?

नरेन्द्र : (सोचते हुए) प्रतीक मतलब···मतलब···जो भी होता है, आप बस याद कर लीजिए। आपसे कौन सा किसी ने शब्द का मतलब पूछना है ?

बिहारी : (मुस्करा कर) हां, हां, पूछ ही कौन सकता है ? पर ऐसे शब्द ज़रा कम डाला करो भाषण में।

नरेन्द्र : बिहारी जी, इन्हीं से तो भाषण में वज़न आता है।

बिहारी : वज़न तो आता है, नरेन्द्र, लेकिन मेरे लिए भारी हो जाता है···याद करना। कोई बात नहीं, कर लूंगा यह भी। तालियां तो पड़ेंगी न इस पर।

नरेन्द्र : (सिर हिलाते हुए) हां, हां, क्यों नहीं ? कैसे नहीं पड़ेंगी तालियां ? ज़रूर पड़ेंगी। (रुक कर, सोचते हुए) पर आप प्रैस वालों से तो कहला देंगे न ?

बिहारी : किस बात के लिए ?

नरेन्द्र : व···वहां, कविताएं न छापने के लिए।

बिहारी : अच्छा। हां, हां, कह दूंगा घनश्याम से। कह दिया तुम्हें एक बार, फिर तुम···अच्छा चलो, अभी तुम जल्दी भाषण याद करवाओ और···और कुछ देर के लिए उस बात को भूल जाओ।

नरेन्द्र : (स्वगत) कैसे भूल जाऊं ? मेरी ज़िन्दगी-मौत का सवाल है और तुझे भाषण की पड़ी है। (बिहारी से) जी, वह तो मैंने ऐसे ही, ऐसे ही पूछ लिया था। (कागज़ देख कर) हां, तो पुल देश की एकता का प्रतीक है और देश की एकता···

दृश्य-5

(थाना, थानेदार का कमरा जिसके प्रवेश-द्वार के पास एक सिपाही बैठा है। अन्दर थानेदार मेज़ पर पड़ी फ़ाइल पढ़ रहा है। नरेन्द्र तेज़ी से मंच पर आता है और सिपाही के पास रुक जाता है।)

नरेन्द्र : (सिपाही से) क्या मैं इंस्पैक्टर साहब से मिल सकता हूं?

सिपाही : नहीं।

नरेन्द्र : क्यों?

सिपाही : क्योंकि बिना मतलब वह किसी से नहीं मिलते।

नरेन्द्र : पर भाई मुझे रपट लिखवानी है।

सिपाही : तो इसमें वह क्या कर सकते हैं?

नरेन्द्र : (परेशान होकर) भई, अजीब आदमी हो। मुझे रपट लिखवानी है, तो उनसे मिलना तो पड़ेगा।

सिपाही : नहीं, कोई ज़रूरत नहीं। उनका वक्त बहुत कीमती है। अभी वह बहुत ज़रूरी काम कर रहे हैं। हां, तुम अपनी तकलीफ़ मुझे बता सकते हो। अगर रपट दर्ज करने लायक हुई तो मैं तुम्हें अन्दर जाने दूंगा।

नरेन्द्र : (स्वयं को संयत करके) मेरे घर चोरी हो गई है।

सिपाही : अच्छा, क्या चोरी हो गया ?

नरेन्द्र : एक फाइल चोरी हो गई है।

सिपाही : (मुस्करा कर) बस, एक फाइल ही चोरी हुई है न। इसमें फिर इतना परेशान होने की क्या बात है ?

नरेन्द्र : (झुंझला कर) उसमें···उसमें··· (स्वगत) इसे क्या समझ आएगा। (सिपाही से) उसमें बहुत जरूरी काग़ज थे।

सिपाही : कौन से ज़रूरी काग़ज ?

नरेन्द्र : (सोच कर) यह मैं तुम्हें नहीं बता सकता।

सिपाही : (सिर हिला कर) ठीक है, फिर तुम घर जाओ। मैं एक फाइल की चोरी के छोटे से मामले के लिए इंस्पैक्टर साहब को परेशान नहीं कर सकता।

नरेन्द्र : देखो भाई, तुम मुझे इंस्पैक्टर साहब से मिलने दो। मैं उन्हें समझा दूंगा।

सिपाही : (हंस कर) अच्छा। अरे, जब तुम मुझे नहीं समझा पाए, तो उन्हें क्या समझाओगे ? दोस्त, कोई समझाने वाली बात करो।

नरेन्द्र : क्या मतलब ?

सिपाही : (समझाते हुए) देखो। जब तुम मुझे ऐसे नहीं समझा पा रहे, तो कोई ऐसा जुगाड़ करो कि मैं ही खुद को समझा लूं। (धीमे स्वर में) यही कोई बीस-पचास रुपये खर्च करके। (ऊंची आवाज़ में) इतने में होता है मेरे समझने का प्रबंध।

नरेन्द्र : अच्छा-अच्छा। ठीक है। (जेब में हाथ डालकर) पहले ही बता देते तो···

सिपाही : हैं, हैं, मैंने सोचा आप खुद हो …

नरेन्द्र : (सिपाही को नोट थमाते हुए) नहीं, मैं जरा परेशान था, तो…

सिपाही : हां, हां, मैं आपकी परेशानी समझ सकता हूं। (नोट जेब में रख कर) अब समझ ही गया हूं। (हाथ से इशारा करके) जाइये, इंस्पैक्टर साहब अन्दर ही हैं।

(नरेन्द्र सिपाही के पास से दरवाजा पार कर इंस्पैक्टर के सामने आ जाता है।)

इंस्पैक्टर : (कागज़ों से नजर उठा कर) क्या नाम है ?

नरेन्द्र : (घबरा कर) जी, नरेन्द्र।

इंस्पैक्टर : पता ?

नरेन्द्र : पचानवे, कृष्ण नगर।

इंस्पैक्टर : हूं, हूं, कब से जानते हो उसे ?

नरेन्द्र : (चौंक कर) जी, किसे ?

इंस्पैक्टर : उसी नरेन्द्र को।

नरेन्द्र : जी, मैं ही नरेन्द्र हूं।

इंस्पैक्टर : अच्छा। (श्वास छोड़ते हुए) फिर तो यह पता भी तुम्हारा ही होगा ?

नरेन्द्र : जी हां, लेकिन…आप किसका नाम, पता पूछ रहे थे ?

इंस्पैक्टर : जिसके ऊपर तुम्हें शक है, यानी जिसने तुम्हारे… मतलब किस वारदात की रपट लिखाने आए हो ?

नरेन्द्र : जी, चोरी की।

इंस्पैक्टर : जिसने चोरी की, उसके बारे में क्या जानते हो ?

नरेन्द्र : कुछ नहीं। अगर जानता…तो यहां क्यों आता, खुद न कुछ करता।

इंस्पैक्टर : (गुस्से से) यानी कानून को हाथ में लेते। बैड, वैरी बैड,

यही एक चीज़ है जिससे मुझे नफ़रत है। (शांत होकर) खैर अभी तक सब ठीक है, क्योंकि तुमने ऐसा किया नहीं। ऐसा कभी करना भी नहीं।

नरेन्द्र : नहीं करूंगा, पर आप रपट तो लिख लीजिए।

इंस्पैक्टर : (निराश स्वर में) क्या लिखूं? तुम्हें कुछ पता तो है नहीं। ऐसे लिख लूंगा तो क्या होगा? रपट पड़ी रहेगी। हमारा एक पैंडिंग केस और हो जाएगा। तुम जाओ, तुम्हारे केस का कुछ नहीं हो सकता।

नरेन्द्र : तो क्या आप कुछ नहीं कर सकते?

इंस्पैक्टर : (झुंझला कर) क्या करूं, क्या करूं? जब तुम सहयोग ही नहीं करते कुछ बताते ही नहीं कि चोरी किसने की, तो मैं क्या कर सकता हूं?

नरेन्द्र : (गिड़गिड़ाते हुए) इंस्पैक्टर साहब, मेरी जीवन भर की कमाई लुट गई। आप कुछ तो कीजिए। मैं पता लगाने में आपकी पूरी मदद करने को तैयार हूं।

इंस्पैक्टर : ठीक है, वैसे…क्या चोरी हो गया है तुम्हारा?

नरेन्द्र : जी, एक फ़ाइल थी, जिसमें…कुछ कविताएं थीं।

इंस्पैक्टर : (ज़ोरों से हंसकर) अच्छा, कविता…हा हा…कविताएं थीं। (चुप होकर) हवालदार! साहब को ज़रा बाहर का रास्ता दिखाओ। (नरेन्द्र से) तुम लोगों को मज़ाक करने के लिए हम पुलिस वाले ही मिलते हैं। (गुस्से में आ कर) शहर में खून हो रहे हैं, डकैतियां हो रही हैं, बड़े-बड़े जलसे हो रहे हैं और मैं तुम्हारे चार काग़ज़ ढूंढने निकल पड़ूं। पागल समझा है क्या? जाओ, जाओ, फ़ज़ूल समय मत ख़राब करो मेरा।

(नरेन्द्र एकदम मूर्तिवत् हो जाता है।)

इंस्पैक्टर : जाओ भी अब।

नरेन्द्र : (कुछ सोच कर) मैं ज़रा एक फ़ोन कर सकता हूं ?

इंस्पैक्टर : (गुस्से से) क्यों, अठन्नी नहीं है क्या ? मोड़ पर पब्लिक फ़ोन है।

नरेन्द्र : नहीं, मुझे ज़रा आपकी बात करवानी थी। (अकड़ कर) क्यों, करेंगे ?

इंस्पैक्टर : (सम्हल कर) हां, हां, किससे ?

नरेन्द्र : बिहारी लाल जी से।

इंस्पैक्टर : तो आप उनके आदमी हैं। (स्वगत) कहीं झूठ तो नहीं बोल रहा। (नरेन्द्र से) पहले क्यों नहीं बताया आपने ? आप फ़ोन कीजिए न उन्हें। मुझे भी···उन्हें बधाई देनी थी, पुल के मुहूर्त की।

(नरेन्द्र फ़ोन उठाकर नम्बर घुमाता है।)

नरेन्द्र : हलो, कौन ? क्या···घनश्याम···और भाई तुमने प्रेस वालों से बात कर ली थी।···चलो, ठीक है, यह बहुत अच्छा किया तुमने। अच्छा, ज़रा बिहारी जी से बात करवाओ।···पार्टी चल रही है···अरे नहीं भाई, मैं पार्टी में कहां आ सकता हूं ?···है कुछ चक्कर, बाद में बताऊंगा तुम्हें। हां, बिहारी जी से कहो कि थाने से बोल रहा हूं। ज़रा इंस्पैक्टर साहब से बात करवानी थी। हां···हां मैं होल्ड कर रहा हूं। (इंस्पैक्टर से) अभी आ रहे हैं। आप नहीं गए पार्टी में ?

इंस्पैक्टर : वैसे ही बस। ड्यूटी थी। मैंने सोचा शाम को जा कर सलाम मार आऊंगा और बधाई दे आऊंगा। पार्टी में वैसे भी हमारा जाना···

(नरेन्द्र हाथ उठाकर इंस्पैक्टर को चुप करने का इशारा करता है।)

नरेन्द्र : हलो, हां जी, नरेन्द्र बोल रहा हूं।···जी, थाने से ही ···यूं ही···इंस्पैक्टर साहब भी आपको बधाई देना

चाहते थे…हैं हैं…नहीं जी…वह बात नहीं…बस…
आप बात कीजिए ज़रा।
(नरेन्द्र मुस्कराते हुए फ़ोन का रिसीवर इंस्पैक्टर को देता है।)

इंस्पैक्टर : हलो, जी साहब, इंस्पैक्टर शंकर बोल रहा हूं। मुबारक हो, साहब। सच, आज मजा आ गया जलसे का। आपका भाषण तो बस कमाल…नहीं…वह दो-चार लड़के ही थे बस शोर मचाने वाले…हां जी…बाद में पकड़ कर ले जा कर चौक से परे छोड़ दिए थे…जी हां दो-दो डंडे रसीद कर दिए थे गाड़ी में ही।…जी बाकी पब्लिक तो तालियां बजा-बजा कर थक गई।…जी…हां जी…जी यह नरेन्द्र जी आए थे…नहीं, नहीं…वैसे बातों में आपका ज़िक्र आ गया तो…मैंने सोचा कि आपको मुबारकबाद…नहीं जी… जी शाम को आऊंगा।…हां जी, इनका काम तो बस…जी रपट लिख ली है…हां जी, साहब। जी, साथ ही जाऊंगा इनके…जी, जी एकदम अभी। अच्छा, साहब, जी…बस…बस दया है आपकी। नमस्ते, साहब। (इंस्पैक्टर फोन रखकर नरेन्द्र की तरफ़ देखता है और फिर नजर झुका लेता है।)

इंस्पैक्टर : (धीमी आवाज़ में) नरेन्द्र जी, कब हुई चोरी आपके घर?

नरेन्द्र : कल रात। मैं काफ़ी देर से सोया था। करीब दो बजे। तब तक वह फ़ाइल मेरे पास ही थी, बिस्तर पर। सुबह उठा तो ग़ायब थी।

इंस्पैक्टर : कितने बजे उठे आप?

नरेन्द्र : मैं आठ बजे उठा लेकिन बच्चे सुबह सात बजे ही उठ जाते हैं और मेरी पत्नी भी।

इंस्पैक्टर : आपने घर में तो अच्छी तरह देख लिया होगा?

नरेन्द्र : हां, हां, दो-तीन वार सारा घर छान मारा लेकिन कोई पता नहीं चला।

इंस्पैक्टर : और कोई सामान भी चोरी हुआ क्या आपका ?

नरेन्द्र : नहीं, यही तो अजीव वात है कि और कुछ भी चोरी नहीं हुआ। (श्वास छोड़ कर) वस···वह फ़ाइल ही, जबकि मैं किसी से उसके वारे में वात भी नहीं करता, घर के लोगों को छोड़ कर।

इंस्पैक्टर : यानी आपको किसी पर शक भी नहीं है ?

नरेन्द्र : (सोच कर) नहीं। कुछ कालेज के समय के दोस्त भी जानते थे, लेकिन उनका अब कोई पता नहीं कि कहां हैं, क्या करते हैं ?

इंस्पैक्टर : उनमें से किसी का भी पता नहीं है, अब आपको ?

नरेन्द्र : जी नहीं, क्योंकि मैं मेरठ में पढ़ता था और एम० ए० पास करके वापस यहां आ गया और किसी से कोई सम्पर्क ही नहीं रहा। एक-दो की चिट्ठी आती ही रही शुरू में लेकिन फिर वह भी वन्द हो गयी···अब तो कई साल हो गए।

इंस्पैक्टर : (दोनों हाथ मेज पर रखते हुए) यानी हमें एकदम शून्य से खोज शुरू करनी पड़ेगी। (सोच कर) आपके घर किन-किन लोगों का आना-जाना है ? दोस्त, रिश्तेदार वग़ैरह।

नरेन्द्र : जी, भाइयों और रिश्तेदारों से तो मेरी वोलचाल वन्द है। न तो मैं ही उनके पास जाता हूं, न वे ही मेरे पास आते हैं।

इंस्पैक्टर : और दोस्त, जानकार, कोई···

नरेन्द्र : जी, मिलने वालों में एक तो विहारी जी ही हैं। उन पर तो मैं शक कर ही नहीं सकता। यही वात लाला हरिराम के साथ भी है। विनय भी ऐसा काम तो···

इंस्पैक्टर : (एकदम) यह विनय कौन है ?

नरेन्द्र : लाला सूरज प्रकाश का लड़का।

इंस्पैक्टर : वह आपके पास किस काम से आता है ?

नरेन्द्र : किस काम से··· (सोच कर) बस वैसे ही, मिलने आता है।

इंस्पैक्टर : तो हो सकता है उसने ही आपकी फ़ाइल चोरी की हो। उसकी पहले भी दो-तीन शिकायतें आ चुकी हैं मेरे पास, लेकिन बहुत मामूली केस थे तो मैंने···

नरेन्द्र : हो सकता है, लेकिन किस किस्म की शिकायतें थीं ?

इंस्पैक्टर : अजी, जिस किस्म की दसियों जवान लड़कों की आती हैं···यही लड़कियों से छेड़छाड़ के बारे में। हम आम-तौर पर कोई एक्शन नहीं लेते, जब तक मामला ख़ास न हो। कभी-कभार समझौता भी करवा देते हैं, लड़कों को समझा-बुझा कर। विनय के केस में हमने कोई कारवाई नहीं की कभी। लाला जी तो आप जानते हैं कितने इज्ज़तदार आदमी हैं।

नरेन्द्र : (मुस्करा कर) हां, वह तो हैं ही, लेकिन इस बार तो कुछ करना ही पड़ेगा। आपकी बात से मुझे शक हो गया है उस पर।

इंस्पैक्टर : (उठते हुए) तो चलिए फिर, अभी पकड़ कर बन्द कर देते हैं। उगल देगा सब-कुछ दो-चार हाथ में।

नरेन्द्र : नहीं, नहीं, इंस्पैक्टर साहब, पहले आप मुझे खुद कुछ जांच कर लेने दीजिए। (उठता है) फिर आपको कष्ट दूंगा।

इंस्पैक्टर : देख लीजिए, जैसी आपकी मर्जी हम तो हमेशा आपकी सेवा में हाज़िर हैं।

नरेन्द्र : अच्छा, अभी मैं चलता हूं। कल आप से मिलूंगा।

इंस्पैक्टर : ठीक है।

नरेन्द्र : नमस्ते !

इंस्पैक्टर : नमस्ते···जी !

•

दृश्य-6

(नरेन्द्र के घर की बैठक। नरेन्द्र और शीला बैठे हैं।)

शीला : पर विनय आपको फ़ाइल क्यों चुराएगा ? वह तो आपका पूरा भक्त है।

नरेन्द्र : भक्त काहे का ? अपनी जरूरत को आता है वरना मैं कौन सा देवता हूं, जो वह मेरी भक्ति करेगा ?

शीला : मान लिया लेकिन उसे फ़ाइल के बारे में तो कुछ मालूम ही नहीं।

नरेन्द्र : (हाथ हिला कर) अरे नहीं, नहीं। असल में मैंने उससे एक बार कहा था कि जो प्रेम-पत्र और छंद उसे लिखवाता हूं, वह एक फ़ाइल में मेरे पास हैं। वह शायद इसी धोखे में फ़ाइल उठाकर ले गया होगा, पैसे बचाने के चक्कर में। वैसे भी तेज़ किस्म का लड़का है। कुछ कह नहीं सकते कि चोरी कैसे की होगी या करवाई होगी ? पर जो भी हो, समझाने-बुझाने पर लौटा देगा।

शीला : पर अगर अपमान के डर से न लौटाए तो ?

नरेन्द्र : मैं कोई बेवकूफ़ नहीं हूं जो उससे सीधे कहूंगा कि तूने

मेरी फ़ाइल चुराई है; उसे लौटा दे। (सोच कर) पीछे एक दिन वह कॉलेज की कुछ किताबें ले कर यहां आया था। उसे कहूंगा कि वह शायद ग़लती से उनके साथ मेरी एक फ़ाइल भी ले गया था।

शीला : (सिर हिला कर) हां, यही तरीका ठीक है। (रुक कर) ···लेकिन उसने तब भी इनकार कर दिया तो क्या करोगे?

नरेन्द्र : (ऐंठ कर) इनकार कैसे कर देगा? जब उसे कहूंगा कि या तो फ़ाइल लौटा दे या फिर मैं तेरे बाप को सब कुछ बता दूंगा और हरिराम को भी, तो अक्ल ठिकाने आ जाएगी···और फिर अपने इंस्पेक्टर साहब किस दिन काम आएंगे। वह तो आज ही उसे दुरुस्त करने के लिए कह रहे थे···मैंने ही मना कर दिया उन्हें।

शीला : (घबरा कर) नहीं, नहीं, उसे पुलिस के हाथ मत दे देना। बहुत बुरी हालत होगी बेचारे की। याद है न, तुम्हारे साथ कितना बुरा हुआ था?

नरेन्द्र : हां, हां, लेकिन होने दो। अगर मुझे धोखा देगा तो और क्या होगा?

(शीला मुंह बना कर फेर लेती है। कुछ क्षण दोनों चुपचाप अलग-अलग दिशाओं में देखते हुए सोचते हैं)

शीला . आया नहीं अभी तक?

नरेन्द्र : (चौंकते हुए) कौन? विनय?

शीला : अरे नहीं, दुलारे। उसे विनय का घर तो बता दिया था न ठीक से?

नरेन्द्र : हां, बताया तो था, लेकिन यह भी कोई मामूली नौकर थोड़े ही है? आख़िर एम० एल० ए० का नौकर है, सरकारी गति से ही काम करेगा। कहीं बैठा बीड़ी पी

रहा होगा अभी तो।

(चुन्नू प्रवेश करता है। नरेन्द्र को ध्यान से देखता है।)

चुन्नू : पिता जी, आज आप सुबह से गुस्से में क्यों हैं?

नरेन्द्र : बेटे, मेरी कविता वाली फ़ाइल चोरी हो गई है।

चुन्नू : किसने चोरी की, पिता जी?

नरेन्द्र : विन···(रुक कर) ···पता नहीं बेटे, पता लगे गा तो बताऊंगा।

चुन्नू : अगर पता नहीं लगा तो?

नरेन्द्र : (खीझ कर) तो तुम्हारा सिर। जाओ, जाकर पढ़ो दूसरे कमरे में। होम-वर्क करो अपना, नहीं तो कल फिर रिमार्क मिलेगा टीचर से (उठकर, ऊंचे स्वर में) जाओ यहां से।

(चुन्नू रोने लगता है। शीला उठकर उसे उठा लेती है और चुप कराने की कोशिश करती है। फिर मुड़ कर गुस्से से नरेन्द्र को देखती है।)

शीला : ऐसे क्यों डांटते हो बच्चे को? अगर तुम्हारी कविताएं चोरी हो गई हैं तो इसमें बेचारे चुन्नू की क्या ग़लती है?

नरेन्द्र : मैंने कब कहा कि इसकी ग़लती है? जिसकी ग़लती है, उसे तो मैं देख ही लूंगा। तुम इसे लेकर दूसरे कमरे में चली जाओ। कहीं इसे पीट न दूं मैं गुस्से में? (हाथ नचा कर) कैसे-कैसे सवाल करता है? (मुंह बना कर) अगर न पता चला तो? (चुन्नू को घूरकर) बेवकूफ़ कहीं का।

शीला : (चुन्नू को गले लगाते हुए) ठीक है, ठीक है। ले जाती हूं इसे। करो जो करना है तुम्हें। बच्चे पर गुस्सा करने का क्या मतलब है? चोरी करे कोई और पिटें मेरे

वच्चे, हुंह।

(शीला बाहर चली जाती है। नरेन्द्र बड़बड़ाते हुए बैठ जाता है। दरवाजे पर दस्तक होती है।)

नरेन्द्र : अरे शीला, देखना तो कौन है?

शीला : (भीतर से) खुद ही देख लो। तुम्हारा दुलारे ही होगा।

(नरेन्द्र उठकर दरवाजा खोलता है।)

नरेन्द्र : आओ भाई दुलारे, अकेले ही लौट आए। विनय नहीं मिला क्या?

दुलारे : (अन्दर आते हुए) नहीं मिला जो, और अब मिल भी नहीं सकता आकर साहब आपको। आप ही को खुद जाकर मिलना पड़ेगा उससे, अस्पताल में।

नरेन्द्र : अस्पताल में? क्यों? क्या हो गया है उसको?

दुलारे : किसी लड़के से झड़प हो गई थी। उसने टांग तोड़ दी विनय की। हड्डी टूट गई है, सो अब भरती है आज सुबह से।

नरेन्द्र : (विस्मय से) अच्छा। (स्वगत) तो मेरी मान कर उसने अपनी टांग तुड़वा ली। (दुलारे से) लेकिन तुम्हें यह सब किसने बताया?

दुलारे : उसकी गली के लड़कों से पता चला। फिर मैं आ कर अस्पताल भी हो आया, इसीलिए साहब, कुछ देरी भी हो गई; आपके पास पहुंचने में।

नरेन्द्र : चलो, उसकी तो कोई बात नहीं।

(नरेन्द्र सोचने लगता है। दुलारे उसे ध्यान से देखता है।)

दुलारे : (अचानक) साहब, अब मेरे लिए क्या हुक्म है?

नरेन्द्र : अ…हां, तुम…जाओ। मैं अब खुद देख लूंगा।

दुलारे : अच्छा, साहब, फिर चलता हूं। (चला जाता है)

(दुलारे बाहर चला जाता है। नरेन्द्र दरवाजा बन्द कर के

बैठ जाता है)

नरेन्द्र : शीला, शीला !

शीला : (अन्दर से) क्या हो गया अब ?

नरेन्द्र : इधर आओ भाई, तुमसे सलाह करनी है।

शीला : आती हूं। (अन्दर आकर) हां, क्या हुआ ? विनय नहीं आया ?

नरेन्द्र : नहीं, वह अस्पताल में है। टांग की हड्डी टूट गई है उसकी।

शीला : कहीं झूठ तो नहीं बोल रहा था दुलारे ?

नरेन्द्र : (मुस्करा कर) नहीं, नहीं। मुझे तो वैसे ही पता था कि उसकी टांग टूटने वाली है।

शीला : तुम्हें कैसे··· (घबराई आवाज में) कहीं तुमने तो इंस्पैक्टर से कह कर···

नरेन्द्र : अरे नहीं, नहीं। मैंने नहीं कहा, पर मेरे कहने पर···

शीला : तो क्या ?

नरेन्द्र : कुछ नहीं। कल विनय ने बताया था कि एक गुंडा उसको टांग तोड़ने की धमकी दे रहा है तो मैंने उसे कहा कि···कि डरने की कोई बात नहीं···करने दो जो करता है। बाद में हम उसे देख लेंगे।

शीला : यह क्या सलाह दी तुमने उसे ? करने दो जो करता है·· हुंह।

नरेन्द्र : (सिर हिलाते हुए) इस सलाह की समझ तुम्हें नहीं आएगी। इसे छोड़ो। अब बात यह है कि उसकी लड़ाई हुई आज सुबह और फ़ाइल चोरी हुई कल रात। हो सकता है कि यह उसी का काम हो, तो मुझे अस्पताल जाकर उससे बात करनी पड़ेगी, अच्छी तरह।

शीला : (गुस्से से) तुम अच्छे आदमी हो। उधर उस बेचारे की

टांग टूट गई है और तुम उसे और परेशान करोगे। कुछ तो सोचो।

नरेन्द्र : (ऐंठ कर) क्यों? अब उसकी टांग टूट गई तो उसने चोरी ही नहीं की? मैं तो जा कर ज़रूर पूछताछ करूंगा उससे।

शीला : (समझाते हुए) ज़रा सोचो। क्या अच्छा लगेगा कि तुम अस्पताल जाओ, जहां लोग मरीज़ों को देखने, उनकी हिम्मत बंधाने आते हैं, और तुम उसे वहां जाकर, उसे वहां तंग करो? वैसे भी विनय अच्छा लड़का है। मेरे ख़्याल से यह उसका काम नहीं है।

नरेन्द्र : अरे, कैसे नहीं है? इतना दूध का धुला नहीं है वह?

शीला : पता नहीं तुम ऐसा क्यों कह रहे हो? मुझे तो बहुत शरीफ़ लगता है। (रुक कर) मैं तो छोटी के लिए उसके बारे में सोच रही हूं। खाते-पीते घर का है।

नरेन्द्र : (स्वगत) यह नहीं मानेगी। समझाता हूं इसे। (शीला से) देखो, तुम यह ख़्याल दिल से निकाल ही दो तो अच्छा है। तुम्हें मालूम है न, वह मेरे पास किस लिए आता है? (ज़ोर देकर) प्रेम-पत्र लिखवाने।

शीला : तो क्या हुआ? तुमने भी तो शादी से पहले यही सब किया था, लेकिन जब भाई साहब ने मुझ से शादी करवा दी, तो सुधर नहीं गए अपने आप।

नरेन्द्र : अ···हां, हां···वह तो है पर बात सिर्फ़ इतनी सी होती तो मैं न कहता। मैं···मैंने एक बार ज़िक्र किया था उससे छोटी का, तो···तो जानती हो क्या बोला वह?

शीला : देखो, झूठ मत बोलना।

नरेन्द्र : नहीं भाई···स···सच ही बता रहा हूं। कमीना कहता था कि छोटी की शक्ल ऐसी है कि···आदमी देख ले तो

डर जाए।

शीला : (भड़क कर) झूठ बोल रहे हो तुम। वह ऐसा कभी नहीं कह सकता। (शांत होकर) कम से कम तुम्हारे सामने तो तुम्हारी साली को ऐसा…

नरेन्द्र : अरे, तब उसे मालूम ही कहां था कि छोटी तुम्हारी बहिन है हां, बाद में माफ़ी मांग ली थी मुझसे उसने और…और पांव पड़ गया था मेरे कि मैं यह बात तुम से न कहूं।

शीला : (उदास स्वर में) अच्छा, तो तुमने भी मुझे नहीं बताया और मैं…उसे प्यार से चाय पिलाती रही और कभी-कभी…हूं पकौड़े भी। (गुस्से से) अब आने दो। देखती हूं, कैसे घुसता है घर में? छोटी के बारे में ऐसा कहता है। कभी अपनी सूरत देखी है शीशे में…और ऊपर से आवारा।

नरेन्द्र : हां, वह ऐसा है, इसलिए तो मुझे शक हुआ उस पर। (मुस्कराते हुए) अच्छा, मैं फिर जाऊंगा उससे पूछताछ करने?

शीला : हां, जाओ। (रुक कर) ध्यान रखना, कहीं तुम से कुछ ऊंच-नीच न हो जाए, उसके बाप की…। मेरी मानो तो पुलिस वाले ले जाओ साथ, एक-दो।

नरेन्द्र : अरे नहीं, मैं तो उसके पास जाऊंगा, जब उसका कोई मिलने वाला न आया हो। खुद वह मेरा क्या बिगाड़ लेगा? टांग तो टूटी हुई है उसकी।

शीला : हां, यह ठीक है पर…फिर भी उससे सच बुलवाने के लिए पुलिस…

नरेन्द्र : नहीं, नहीं, उसके लिए तो मैं ही काफ़ी हूं। चलो, मेरे जूते तो ला दो।

(शीला अन्दर जाती है और जूते उठाए हुए लौट आती है।)

नरेन्द्र : (शीला से जूते लेते हुए) शीला, तुम तो देख ही रहो हो कि मैं कितना परेशान हूं आजकल। तुम्हें और बच्चों को भी उल्टा-सीधा कह बैठता हूं।

शीला : तो क्या हुआ ? मैं समझती हूं आपकी परेशानी को। बुरा थोड़े ही मानती हूं आपकी बातों का।

नरेन्द्र : लेकिन बच्चे तो उदास हो जाते हैं। देखो, इस तरह बुरा असर पड़ता है, बच्चों के दिमाग पर। तुम ऐसा करो कि बच्चों को लेकर कुछ दिन अपनी मां के पास लगा आओ।

शीला : नहीं, तुम्हें यहां अकेले छोड़ कर नहीं जाऊंगी मैं। (सोच कर) वैसे तो मैं भी सोच रही थी मायके जाने की, पर…

नरेन्द्र : अरे छोड़ो, तुम कल ही चली जाओ।

शीला : लेकिन तुम्हारा खाना ?

नरेन्द्र : बाहर खा लूंगा और दुलारे तो है ही अभी कुछ दिन मेरे पास। बिहारी ने कहा ही हुआ है कि मैं उसे अपने ही पास रख लूं अब।

शीला : ठीक है, जैसा तुम कहो, लेकिन…लेकिन बच्चों की पढ़ाई का क्या होगा ?

नरेन्द्र : अरे, आठ-दस दिन में क्या फ़र्क पड़ता है। बाद में पूरी कर लेंगे। वैसे थोड़ी बहुत किताबें भी ले जाओ उनके साथ।

शीला : यह ठीक है। तो फिर मैं तैयारी कर लेती हूं।

नरेन्द्र : (जूते पहनते हुए) अच्छा, तुम तैयारी करो। मैं जाकर विनय की खबर लेता हूं।

●

दृश्य-7

(अस्पताल का कमरा। विनय पलंग पर लेटा है। उसकी टांग पर प्लास्टर चढ़ा है। उसके पास ही एक नर्स खड़ी है। नरेन्द्र दरवाज़े के पास खड़ा उनकी बातें सुन रहा है।)

नर्स : पर मैंने तुम्हारे लिए क्या किया है ? यह तो मेरा काम है।

विनय : नहीं, नहीं। तुमने जो किया है, वह कोई नहीं करता किसी के लिए।

नर्स : पर क्या किया मैंने ?

विनय : "सब शीशा-ए-दिल पर मारते थे पत्थर,
तुमने मरहम कर दिया।
लोगों ने दर्द दिया इसको,
तुमने इस दिल पर करम कर दिया।"

नर्स : हाउ स्ट्रेंज। मैंने तुम्हारी टांग पर प्लास्टर चढ़ाया। बीच में यह दिल कहां से आ गया ?

विनय : (धीरे-धीरे उठते हुए)
'हम और तुम मिले जहां,

अपनी नज़र में महफ़िल है।
प्यार से जहां छुआ तुमने,
समझो वही मेरा दिल है। आ···आह।'
(कराह कर दोबारा लेट जाता है।)

नर्स : (हंसते हुए) मैंने कहा था न आराम से लेटने के लिए। क्यों उठने की कोशिश की?

विनय : वह, मैं तुम्हें सुना जो रहा था।

नर्स : देखो, तुम वैसे बहुत अच्छे आदमी हो, अगर···अगर ऐसी मूर्खतापूर्ण कविता नहीं सुनाओ तो। अच्छी भली बातें कर रहे थे, तुम दोपहर में। अब क्या हो गया है; तुम्हें ?

विनय : असल में तुम्हें देखकर मैं · मैं···मैं भावुक हो गया हूं। इसीलिए यह कविता सुना रहा था।

नर्स : वाह, यह भी कोई बात है? यह कोई चलचित्र का दृश्य तो नहीं है; जो कविता की; गाने की; ज़रूरत हो। ठीक से बात करो। वास्तविक जीवन में तो लोग दूसरों को बेवकूफ़ बनाने के लिए यह सब सुनाते हैं।

विनय : बेवकूफ़ बनाने के लिए?

नर्स : और क्या? जैसे··· (सोचकर) एडवरटाइज़मेंट में बेकार चीज़ को बेचने के लिए, जैसे भाषणों में और··· (मुस्कराकर) प्रेम-पत्रों में।

विनय : (स्वगत) इसे कहीं पता तो नहीं (घबराए स्वर में नर्स से) हां, हां, वह तो है। (संयत हो कर) चलो, मैं अब कभी तुम्हें कविता नहीं सुनाऊंगा। ओ॰ के॰।

नर्स : दैट इज़ गुड, अच्छा है।

विनय : तो फिर तुम कल सुबह आओगी न?

नर्स : (मुस्कराते हुए) हां, आऊंगी। बाई, गुड नाइट।

(मुड़ कर जाने लगती है। दरवाजे पर नरेन्द्र को देखकर रुकती है। फिर तेजी से बाहर चली जाती है। नरेन्द्र टहलते हुए विनय के सामने आता है।)

नरेन्द्र : तो मिस्टर विनय, आप यहां भी उसी चक्कर में हैं?

विनय : अरे नरेन्द्र जी। आइये, आइये, बैठिए।

नरेन्द्र : (बैठते हुए) तो तुमने मेरी बात मान ही ली। चलो, अच्छा है। मैं कल ही किसी न किसी तरह यह ख़बर वीणा तक पहुंचा ही दूंगा कि तुमने उसके लिए···

विनय : (बात काटते हुए) नहीं, नरेन्द्र जी, उसकी अब कोई जरूरत नहीं।

नरेन्द्र : क्यों? अब क्या हो गया?

विनय : (धीमे स्वर में) जो, बात ऐसी है कि मैंने आपकी सलाह मान कर अच्छा किया पर उस कारण से नहीं जो आप सोचते हैं बल्कि इसलिए कि अगर मैं टांग न तुड़वाता तो अस्पताल न आता और नहीं आता तो चित्रा कैसे मिलती मुझे? चित्रा···अभी जो···

नरेन्द्र : अच्छा, वह नर्स?

विनय : (शरमाकर, मुस्कराते हुए) हां, वही। सच। सब किस्मत के खेल हैं, पर जो भी हो, मैं आपका अहसान कभी नहीं भूल सकता।

(विनय खिड़की से बाहर देखते हुए सोचने लगता है।)

नरेन्द्र : (कुछ क्षण बाद) पर, वीणा का···

विनय : (एकदम नरेन्द्र की ओर देखकर) भूल जाऊंगा उसे। याद रखकर भी क्या फ़ायदा? जिस शहर जाना नहीं, वहां का रास्ता क्या पूछना?

नरेन्द्र : क्यों? क्या तुम इस चित्रा के चक्कर में वीणा को भूल जाओगे, जिससे तुम दो साल से प्रेम करते हो?

विनय : (विश्वास भरे स्वर में) हां, क्योंकि वीणा ने कभी मुझसे सच्चा प्यार नहीं किया। वह तो बहुत घमंडी है और जाहिल भी। सिर्फ़ सुन्दर होना तो सब कुछ नहीं होता ?

नरेन्द्र : (विनय के कंधे पर हाथ रखकर) विनय, क्या हो गया है तुम्हें ? तुम्हें एक दिन में ही वीणा ऐसी क्यों लगने लगी ?

विनय : नरेन्द्र जी, जब तक मैं चित्रा से नहीं मिला था, तब तक वीणा मेरे लिए सब कुछ थी, लेकिन अब मैंने देखा कि वीणा तो कुछ भी नहीं चित्रा के सामने। और ··और सबसे बड़ी बात तो यह है कि वह मुझसे प्यार भी करती है।

नरेन्द्र : (कंधे उचका कर) ठीक है, जैसी तुम्हारी इच्छा। वैसे मैं तो धीरे-धीरे हरिराम को लाइन पर ला रहा था।

विनय : रहने दीजिए, नरेन्द्र जी, इस बारे में मैंने अब फ़ैसला कर लिया है।

नरेन्द्र : चलो, अच्छा है। मुझे भी अब हरिराम को नहीं समझाना पड़ेगा। (सोचकर) याद आया। विनय, पिछली बार जब तुम घर आए थे, तो अपनी कुछ किताबें थीं तुम्हारे पास। कहीं ग़लती से उनके साथ तुम मेरी एक फ़ाइल तो नहीं ले गए ?

विनय : (हैरान हो कर) आपकी फ़ाइल नहीं तो। मैं तो नहीं ले गया। पर कौन-सी फ़ाइल ?

नरेन्द्र : एक फ़ाइल थी, जिसमें कुछ कविताएं थीं। वहीं बैठक में पड़ी थी। मैं ने सोचा शायद ग़लती से तुम···

विनय : नहीं, नहीं, मैंने ऐसी कोई फ़ाइल नहीं देखी और मेरे पास तो बस दो ही किताबें थीं अपनी और···वही दोनों वापस भी ले आया।

नरेन्द्र : (ऊंची आवाज में) तुम्हें अच्छी तरह याद है ?

विनय : हां, हां, बिल्कुल अच्छी तरह। मेरे पास नहीं है ऐसी कोई फ़ाइल।

नरेन्द्र : (गुस्से में) देखो, झूठ मत बोलो, विनय। मैं अपने मुंह से नहीं कहना चाहता था कि तुमने मेरी फ़ाइल चोरी की पर तुमने इस तरह साफ़ इनकार करके मुझे मजबूर कर दिया; कहने के लिए।

विनय · (घबरा कर) लेकिन, मैं···

नरेन्द्र : (पूर्ववत्) बहाने बनाने और झूठ बोलने की ज़रूरत नहीं है। कल रात मेरे घर से जो फ़ाइल तूने चुराई है वह लौटा दे, वर्ना मुझे पुलिस की मदद लेनी पड़ेगी।

विनय : (भय और घबराहट के साथ) नरेन्द्र जी, आप क्यों मुझ पर इल्जाम लगा रहे हैं ? मुझे तो कुछ पता नहीं है। मैं कैसे···कैसे चोरी कर सकता हूं ?

नरेन्द्र : (भड़क कर) कैसे नहीं पता ? भूल गए, एक बार मैंने तुम्हें बताया था कि मैं जो सब तुम्हें लिखवाता हूं वह ···वह मेरे पास एक फ़ाइल में है।

विनय : (सोच कर, अटकते हुए) हूं···हां, याद तो है कि आपने कहा था लेकिन चोरी···चोरी करने की तो मैं सोच ही नहीं सकता। पता नहीं···आप मुझ पर क्यों शक कर रहे हैं···मैं···मैं···जो आपकी एक-एक बात मानता रहा हूं और···और आपके कहे पर हमेशा चला हूं···आप कैसे सोच सकते हैं कि मैं···यह काम···कैसे ?

नरेन्द्र : (विनय को घृणा से देखते हुए) जाने दो, तुम आजकल के लड़के कुछ भी कर सकते हो। तुम्हीं ने पैसा बचाने के चक्कर में फ़ाइल चुराई है और···उसके बाद टांग तुड़वा कर अस्पताल भरती हो गए कि मैं तुम पर शक न

करूं, पर मैंने भी बहुत दुनिया देखी है। मैं तुमसे फ़ाइल वापस लेकर और…और तुम्हें जेल भिजवा कर रहूंगा।

विनय : (परेशान होकर, रोते स्वर में) नरेन्द्र जी, अगर मैंने वह फ़ाइल चुराई भी होती तो अब लौटा ही देता। आपने तो देखा ही है कि चित्रा को कविता से नफ़रत है। अब किस काम की…

नरेन्द्र : तो क्या हुआ? दुनिया की सभी लड़कियों को तो नहीं हो गई कविता से नफ़रत। तुमने सोचा कि तुम्हारे दोस्तों के काम आएगी मेरी फ़ाइल, लेकिन यह तुम्हारी ग़लत-फ़हमी है कि उस फ़ाइल में वह है, जो… जो तुम सोचते हो। उसमें वह सब नहीं है जो मैं तुम्हें लिख कर देता हूं। उसमें…उसमें समाज को हिला देने वाली क्रांतिकारी कविताएं हैं जो…जो इस दुनिया को बदल सकती हैं और…और तुम्हारी और तुम्हारे दोस्तों की समझ से बाहर हैं। इसलिए अच्छा होगा अगर तुम वह फ़ाइल मुझे वापस कर दो।

विनय : देखिए नरेन्द्र जी, मैं आपसे सच-सच कह रहा हूं कि मैंने चोरी नहीं की। (रोते हुए) आप ही बताइये, मैं आपको कैसे विश्वास दिलाऊं?

नरेन्द्र : (ऊंचे स्वर में) तुम मुझे क्या विश्वास दिलाओगे? विश्वास और तुम पर? तुम…जिसे मैंने इतना कुछ सिखाया और जिसने मेरे ही घर चोरी की। (आवाज़ धीमी कर, समझाते हुए) तुम्हारे लिए यही अच्छा है कि तुम मेरी फ़ाइल दे दो। मैं किसी से कोई ज़िक्र नहीं करूंगा, पर अगर (आवाज़ ऊंची करते हुए) तुम ऐसा नहीं करते सीधे-सीधे, तो मुझे कुछ न कुछ करना पड़ेगा।

विनय : (घबराए हुए ही) लेकिन…

नरेन्द्र : लेकिन क्या ? घर पर रखी है ? कोई बात नहीं। किसी के हाथ मंगवा लो। मैं कल सुबह ले जाऊंगा तुम से और अगर किसी और को दे दी है तो मुझे उसका पता बता दो। मैं खुद चला जाऊंगा उसके पास।

विनय : (चिल्ला कर) लेकिन जब मैंने चोरी नहीं की, तो कहां से लौटा दूं आपकी फ़ाइल ? आप समझते···

नरेन्द्र : (गुस्से में, उठकर) समझाऊंगा तो तुझे मैं कल। हुंह, मुझे समझाता है। अब पुलिस के साथ ही आऊंगा। मैं तो चाहता था कि तुम ऐसे ही मान जाओ पर तुम्हारी किस्मत में ही जब पुलिस की मार खानी लिखी है तो मैं क्या कर सकता हूं ?

(तेजी से बाहर चला जाता है।)

विनय : नरेन्द्र जी, सुनिए तो···नरेन्द्र जी···(सिर पकड़ लेता है।)

दृश्य-8

(नरेन्द्र के घर की बैठक : नरेन्द्र और इंस्पैक्टर आमने-सामने बैठे है।)

इंस्पैक्टर : नरेन्द्र जी, मैं खुद उसके घर की तलाशी लेकर आया हूं। उससे और उसके घर वालों से पूछताछ भी की है।

नरेन्द्र : (सिर हिलाते हुए) नहीं, नहीं, इंस्पैक्टर साहिब, आपको चाहिए था कि आप उसे थाने ले जाते और वहां उससे जैसे भी···यानी कि अच्छे तरीके से सच उगलवाते।

इंस्पैक्टर : नरेन्द्र जी, यह तो नहीं हो सकता था। टांग टूटी होने से उसे थाने ले जाना तो मुमकिन नहीं था पर हम जो सब कर सकते थे, हमने अस्पताल में करके देख लिया। उस लड़के ने चोरी नहीं की, यह मैं आपको विश्वास से कह सकता हूं।

नरेन्द्र : लेकिन···मैं···नहीं मान सकता कि यह उसके अलावा किसी और का काम है। और कोई है ही नहीं जो ऐसा कर सकता हो।

इंस्पेक्टर : नरेन्द्र जी, हमने उसे बहुत धमकाया और वह डर भी गया, लेकिन वह यही कहता रहा कि उसे इस बारे में कुछ मालूम नहीं। नरेन्द्र जी, धमकियों से ही वह इतना डर गया कि उसने रोना शुरू कर दिया, पर···

नरेन्द्र : (बात काटते हुए) और आप उसका रोना देख कर पिघल गए?

इंस्पैक्टर : नहीं, नहीं, यह बात नहीं। हमने उससे पूरी पूछताछ की कि वह आपके घर से जाने के बाद कहां-कहां गया और किस-किस से मिला और बाद में उन सब लोगों से पूछताछ भी की। वह एकदम सच बोल रहा था।

नरेन्द्र : लेकिन जिस वक्त उसके घर वालों के हिसाब से वह सो रहा था, उस वक्त के बारे में आप कैसे कह सकते हैं कि वह वहीं था और चुपके से कहीं गया नहीं? भई, वह ऐसा कई बार करता है, यह मुझे पता है!

इंस्पैक्टर : जी, इस बारे में भी हमने पूछा उससे···और फिर उसके नौकर गंगू से भी, क्योंकि जब भी वह ऐसा करता है तो वह गंगू से घर के फाटक पर ताला न लगाने को कह देता है।

नरेन्द्र : हां, यह तो वह मुझे भी बता चुका है पहले।

इंस्पैक्टर : ···तो गंगू ने यह बताया कि परसों रात उसने ऐसा नहीं कहा और फाटक पर ताला भी लगाया गंगू ने इसीलिए। तभी तो मैं इतने यकीन से कह रहा हूं कि उसने चोरी नहीं की।···और उसके घर की तलाशी में भी नहीं मिली आपकी फ़ाइल। ख़ातिर वैसे खूब की हमारी सूरज प्रकाश ने, यह सोचकर कि हम शायद इन्कम-टैक्स वाले हैं—मैं सादे कपड़ों में था न।

नरेन्द्र : खैर छोड़िए इस बात को। अब आप मुझे यह बताइये कि मेरी फ़ाइल ढूंढने के लिए आप क्या करेंगे? कल से तो मैं बेफ़िक्र हो गया था, यह सोचकर कि विनय ने ही चोरी की है और हम किसी न किसी तरह उससे निकलवा ही लेंगे, पर अब क्या होगा (उदास मुद्रा बनाकर) मैं कहां जाऊंगा अब ढूंढने उसे, जब कि पता ही नहीं है कि···(सिर झुकाकर चुप हो जाता है।)

इंस्पैक्टर : जी, मैं ऐसे क्या कह सकता हूं? आप जब तक मुझे और सूचना नहीं देते, तब तक···

(दरवाजे पर दस्तक की आवाज)

नरेन्द्र : (झुंझला कर) कौन है?

हरिराम : (बाहर से) मास्टर जी, मैं हूं, हरिराम।

(नरेन्द्र उठकर दरवाजा खोलता है। हरिराम अन्दर आता है।)

नरेन्द्र : (बुझी आवाज में) आइये, हरिराम जी। वैसे मैंने अभी आपका काम शुरू नहीं किया।

हरिराम : (बैठते हुए) कोई बात नहीं। करना तो आप ही को है, दो दिन बाद सही। वैसे मुझे पता चला है कि आपके घर से कागज़···अं···फ़ाइल चोरी हो गई है। मिल जाएगी (इंस्पैक्टर की ओर देखकर, आहिस्ता से) कहीं मेरे वाला फ़ार्मूला तो नहीं था उसमें?

नरेन्द्र : नहीं, नहीं। उसमें मेरे अपने ही कुछ कागज़ थे। आपका आइडिया तो मैंने अभी तैयार ही नहीं किया। कर दूंगा, एक दफ़े मेरी फ़ाइल मिल जाए बस।

हरिराम : (जिज्ञासा से) पर था क्या उस फ़ाइल में?

नरेन्द्र : कविताएं थीं, मेरी लिखी हुई।

हरिराम : (पूर्ववत्) उसका कोई क्या करेगा?

नरेन्द्र : अपने नाम से छपवा लेगा…

इंस्पेक्टर : और जो तारीफ़ नरेन्द्र जी की होनी चाहिए, वह उसे मिल जाएगी।

हरिराम : (एकदम इंस्पेक्टर की ओर देखकर) इंस्पेक्टर साहब, आपका क्या ख्याल है ? चोर कौन है ?

इंस्पेक्टर : अभी कुछ नहीं कह सकते।

नरेन्द्र : यही तो मालूम नहीं। अब क्या कह सकते हैं ? (सोचते हुए) पहले विनय पर शक हुआ था। उसकी अच्छी तरह जांच-पड़ताल की इंस्पेक्टर साहब ने, पर कुछ नहीं निकला। उसके घर की भी तलाशी ली लेकिन…

हरिराम : (प्रसन्न होकर) सूरज प्रकाश के घर की तलाशी ली ? यह तो बड़ी कमाल की बात की आपने इंस्पेक्टर साहब।

इंस्पेक्टर : हां, नरेन्द्र जी के लिए यह तो करना ही था, पर मिली नहीं फ़ाइल वहां से। वैसे, हरिराम जी, आप बताइए, कौन कर सकता है यह चोरी ?

हरिराम : (सोच कर) वैसे तो मेरा शक भी सीधे विनय पर ही जाता, मैं अगर नरेन्द्र जी की जगह होता तो। अब आपने उसके बारे में अच्छी तरह छानबीन कर ली है और कुछ नहीं मिला तो क्या कह सकते हैं ? (रुक कर) वैसे मेरी व्यापारी बुद्धि में एक विचार है, पर क्या पता ग़लत ही हो ? हो सकता है, ठीक ही हो।

इंस्पेक्टर : आप बताइये तो सही, लाला जी।

नरेन्द्र : (आगे बढ़कर) हां, हां, बताइये।

हरिराम : देखो जी, अब अगर मैं आपकी फ़ाइल चुरा लूं, तो मेरे किस काम आएगी ? ज्यादा हुआ तो नौकर को काग़ज़ दे दूंगा, दुकान में पुड़िया बांधने के लिए।

नरेन्द्र : (एक दम भड़क कर) क्या बात कर रहे हैं ? वह काग़ज़ कोई पुड़िया बांधने के लिए हैं ? मेरी सारी ज़िन्दगी की मेहनत…

हरिराम : अरे हां भई, यही तो मैं कह रहा हूं। अब अगर कहीं से ऐसा सौदा मुझे मिल जाए जिसका मैं पहले ही व्यापार करता हूं, तो मैं उसे बेच ही दूंगा और किसी को हवा भी नहीं लगने दूंगा कि कहां से आया, भले चोरी का ही हो।

नरेन्द्र : लेकिन इस बात का मेरी फ़ाइल को चोरी से क्या संबंध है ?

हरिराम : (हंस कर) कमाल है, आइडिया मास्टर जी। इतने बड़े आइडिया मास्टर होकर भी आप मेरे सीधे-सादे विचार को नहीं समझ रहे। (समझाते हुए) भई, जो पहले ही अपनी कविताए छपवाता होगा, वही आपकी कविताएं भी अपने नाम से छपवा सकता है। अब कल को मैं अपने नाम से छपवा लूं, तो कौन मानेगा कि मैंने लिखी हैं। अब आप बताओ कि ऐसे कितने आदमी हैं शहर में जो अपनी लिखी कविताएं छपवाते हैं ? इंस्पैक्टर साहब उनकी तलाशी ले लेते हैं और फिर देखो कैसे नहीं मिलती आपकी फ़ाइल ?

नरेन्द्र : हरिराम जी, मान लिया कि वह फ़ाइल उन लोगों के काम की हो सकती है, लेकिन जब वे जानते ही नहीं कि मेरे पास ऐसी कोई फ़ाइल है तो वे चोरी कैसे कर सकते हैं?

हरिराम : अरे, पता लगाते कितनी देर लगती है ? कहीं की बात कहीं पहुंच जाती है। अब यह तो है नहीं कि उस फ़ाइल के बारे में आपने कभी किसी से कोई बात न की हो।

फिर बात तो फैल ही जाती है। हो सकता है, पहुंच गई हो किसी लिखारी तक।

इंस्पेक्टर : (जो अब तक सोच रहा था) हां, नरेन्द्र जी, हरिराम जी ठीक कह रहे हैं। ऐसा हो सकता है…बल्कि ऐसा ही होता है कई बार।

हरिराम : तो आप ऐसा करो, इंस्पेक्टर साहब, कि इस किस्म के जितने आदमी हैं, उनकी तलाशी ले डालो। फ़ाइल मिल जाएगी, किसी न किसी के पास।

नरेन्द्र : (श्वास छोड़ते हुए) चलिए, ठीक है। यह भी करके देख लेते हैं। शायद मिल ही जाए।

इंस्पेक्टर : तो फिर आप बताइये मुझे, उन लोगों के नाम।



दृश्य-9

(कमरे का दृश्य। कमरे में कोई सामान नहीं है। एक कोने में बैठा एक व्यक्ति, जो बहुत असाधारण कपड़े पहने है, कागज पर कुछ लिख रहा है। बीच-बीच में रुक कर सोचता है, फिर लिखना शुरू कर देता है।)

(दरवाजे पर दस्तक की आवाज)

दिवाकर : चले आइये, दरवाजा खुला ही है। आज ही क्या हमेशा ही खुला रहता है।
(इंस्पैक्टर प्रवेश करता है। इधर-उधर देखकर, फिर दिवाकर की तरफ बढ़ता है।)

इंस्पैक्टर : क्या तुम दिवाकर हो?

दिवाकर : हां, कह सकते हो।

इंस्पैक्टर : क्या मतलब?

दिवाकर : (चिढ़कर) व्यर्थ मतलब मत पूछो।

इंस्पैक्टर : (गुस्से से) क्यों न पूछूं? जब मैंने पूछा कि क्या तुम दिवाकर हो तो हां या न में जवाब देने की बजाये तुमने यह क्यों कहा कि कह सकते हो?

दिवाकर : (मुस्करा कर) क्योंकि जिस तरह तुम्हारे इस वर्दी पहनने से साफ़-साफ़ कहा जा सकता है कि तुम पुलिस वाले हो और कमीज पर लगी नाम-पट्टी पढ़ कर कहा जा सकता है कि तुम्हारा नाम शंकर है, उतना आसान यह कहना नहीं कि मैं दिवाकर हूं और यह भी नहीं कि मेरा नाम दिवाकर है।

इंस्पैक्टर : (स्वगत) अजीब पागल आदमी है। (दिवाकर से) अच्छा, अच्छा, तो मैं तुमसे यह पूछता हूं कि तुम्हारा नाम क्या है?

दिवाकर : मेरा नाम? कौन सा नाम? (सोच कर) मां-बाप ने मेरा नाम हरि नारायण रखा था।

इंस्पैक्टर : (परेशान होकर) तो फिर दिवाकर कौन है?

दिवाकर : मुझे लोग दिवाकर भी कहते हैं।

इंस्पैक्टर : तो फिर तुम्हारा ही नाम दिवाकर हुआ न?

दिवाकर : नहीं, कुछ अन्तर है। दिवाकर मेरा नाम नहीं है।

इंस्पैक्टर : (झुंझला कर) तो और क्या है?

दिवाकर : यह मेरा उपनाम है।

इंस्पैक्टर : (सोचते हुए) उपनाम यानी···ऊपर का नाम···या··· वाइस नेम (खीझ कर) यह उपनाम क्या होता है?

दिवाकर : (मुस्करा कर) तुमने कभी कविता लिखी है?

इंस्पैक्टर : कविता···नहीं-नहीं। मैं क्यों लिखने लगा? भई अच्छी-ख़ासी नौकरी करता हूं। क्यों करूं यह फ़जूल का काम?

दिवाकर : (गुस्से से) तुम मूर्ख हो, बुद्धिहीन हो। संवेदना ही नहीं तुम में। तुम क्या लिखोगे कविता? पूछते हो उपनाम क्या होता है? मैं नहीं बताऊंगा। (सिर झटक कर) कविता लिखने को फ़जूल का काम बताते हो।

इंस्पैक्टर : और क्या बताऊं ? कितना कमा लेते हो महीने में कविता लिख कर ?

दिवाकर : मैं कमाने के लिए कविता नहीं लिखता। साहित्य-सृजन करता हूं, साहित्य का विक्रय नहीं।

इंस्पैक्टर : तो फिर गुज़ारा कैसे चलता है तुम्हारा ?

दिवाकर : मैं···मैं···मेरी पत्नी नौकरी करती है।

इंस्पैक्टर : तो बीवी की कमाई पर जीते हो। शर्म नहीं आती तुम्हें इस तरह जिन्दा रहते ? तुम्हारी बीवी भी क्या सोचती होगी तुम्हारे बारे में ?

दिवाकर . सोचती क्या होगी (अकड़ कर) उसे गर्व है मुझ पर और खुशी है कि वह मेरी सांसारिक ज़रूरतें पूरी करके मुझे साहित्य-सृजन में सहयोग दे रही है। तुम जैसे लोग क्या जानेंगे हमारे बारे में। तुम तो दिन-रात धन और भौतिक वस्तुओं के लोभ में लिप्त रहते हो।

इंस्पैक्टर : (स्वगत) यह तो पीछे ही पड़ गया है। इससे सीधे-सीधे काम की बात की जाए नहीं तो झगड़ा होने में कोई कसर नहीं बचेगी कुछ देर तक। (दिवाकर से) ठीक बात है। हम लोग ज्यादा नहीं समझ सकते आपकी बातें। (रुक कर) अच्छा यह बताओ कि तुम्हारी कितनी कविताएं अब तक नहीं छपीं और तुम्हारे पास ही पड़ी हैं ?

दिवाकर : कई हैं, पर इसलिए नहीं कि ये अच्छी नहीं हैं बल्कि इसलिए कि मेरी ये कविताएं संपादकों और प्रकाशकों की समझ से ऊपर हैं। वास्तव में, वे लोग समझ ही नहीं सकते कि इन कविताओं में कितने गूढ़ विचार और कितनी गहन भावनाएं हैं। (रुक कर) आशा से इंस्पैक्टर को (देख कर) तुम सुनोगे मेरी कविताएं ?

इंस्पैक्टर : नहीं, नहीं, तुम ऐसा करो कि वे सब कविताएं मुझे दे दो। मैं उन्हें अपने एक प्रकाशक मित्र को दे दूंगा जो एक किताब छापने की सोच रहा है। दरअसल, उसी ने मुझे तुम्हारे पास भेजा था लेकिन मैं यूं ही तुम से…

दिवाकर : (प्रसन्न होकर) अच्छा, तुमने मुझे पहले क्यों नहीं बताया? भाई, मुझे माफ़ कर दो कि मैंने तुम्हें उल्टा-सीधा सुनाया। अगर मैं जानता कि……तो…चाय पीओगे?

इंस्पैक्टर : नहीं, नहीं, अभी मैं कुछ जल्दी में हूं। तुम मुझे अपनी कविताएं दे दो ताकि मैं आज ही उन्हें अपने दोस्त तक पहुंचा दूं। कहीं देर हो गई तो…

दिवाकर : (घबरा कर) नहीं, नहीं…अ हां, हां, मैं अभी लाकर देता हूं। (दिवाकर तेजी से अन्दर जाता है और काग़ज़ों का एक बड़ा-सा ढेर उठा कर वापिस आता है। इधर-उधर देख कर कुछ और काग़ज भी उस ढेर पर रख देता है और सब काग़ज़ इंस्पैक्टर को पकड़ा देता है।)

दिवाकर : लो, भाई, पर ज़रा ध्यान से रखना।

इंस्पैक्टर : (काग़ज़ों का ढेर पकड़ कर, उसे देखते हुए) काफ़ी कविता लिख लेते हो तुम।

दिवाकर : यही लिखी हैं। सारे जीवन की यही कमाई है मेरी। छप जाएं तो बहुत अच्छा हो और अगर कुछ मिल जाए तो और भी…

इंस्पैक्टर : हां, हां, मैं कोशिश करूंगा। (स्वगत) कहता था साहित्य बेचने के लिए नहीं होता। (दिवाकर से) चलूं मैं फिर। नमस्ते!

दिवाकर : जी, बहुत कृपा की आपने आकर। नमस्ते!

●

दृश्य-10

(नरेन्द्र की बैठक। नरेन्द्र कागज़ों के ढेरों के बीच सिर पर हाथ रखे बैठा है। पास ही इंस्पैक्टर भी बैठा है।)

इंस्पैक्टर : अच्छी तरह देख लिया है आपने। मैंने तो बड़ी मुश्किल से जाने कैसे-कैसे इकट्ठा किया है, यह सब, आपके लिए। किसी को लालच देना पड़ा, किसी को धमकाना पड़ा और एक जगह तो मार-पीट तक···

नरेन्द्र : (निराश स्वर में) वह सब तो ठीक है लेकिन मेरे कागज़ इनमें नहीं हैं। मैं अच्छी तरह देख चुका हूं।

इंस्पैक्टर : एक बात कहूं, अगर बुरा न मानें तो।

नरेन्द्र : कहिए।

इंस्पैक्टर : देखिए, आपका जो मतलब उस फ़ाइल से था, वह तो इन कविताओं से भी पूरा हो सकता है। (नरेन्द्र कुछ कहने लगता है। उसे हाथ के इशारे से शांत होने का संकेत करके) जरा सोचिए, आप इन सब की एक-एक, दो-दो कविताएं पसन्द करके रख लीजिए। जब मूड बने, छपवा लीजिएगा। किसी को पता भी नहीं चलेगा।

नरेन्द्र : (दुःखी स्वर में) नहीं, इंस्पैक्टर साहब, आप नहीं समझ सकते मेरी तड़प को। आपको क्या मालूम कि कविता और, और चीज़ों में क्या अन्तर है ? अगर मैं आपका कहा मान लूं तो मेरा दिल तो मुझे कोसेगा ही और साथ ही मेरे अन्दर का कवि भी मर जाएगा।

इंस्पैक्टर : नरेन्द्र जी, मुझे आपकी कुछ-कुछ समझ तो आ रही है पर ख़ास समझ नहीं आई, सच पूछिए तो। हां, इतना मैं ज़रूर समझ गया हूं कि आप अपनी फ़ाइल ही वापस चाहते हैं, पर मैं इस बारे में क्या कर सकता हूं ? जितना कुछ मेरे बस में था, मैंने किया, लेकिन अब नहीं मिली तो···

नरेन्द्र : (दोनों हाथ झटक कर) कुछ भी कीजिए। कुछ भी कीजिए, बस मेरी फ़ाइल ढूंढ़ दीजिए मुझे। आप जानते हैं क्या हालत है मेरी ? रात को सो नहीं पाता। भूख नहीं लगती मुझे, कई दफ़े रात में सड़क पर निकल जाता हूं। सड़क पर इधर-उधर पड़े काग़ज़ों को उठा-उठा कर देखता हूं कि कहीं कोई मेरी फ़ाइल से निकला काग़ज़ तो नहीं ? ऐसे···ऐसे तो मैं पागल हो जाऊंगा इंस्पैक्टर साहब !

इंस्पैक्टर : (नरेन्द्र के कंधे पर हाथ रख कर, घबराए स्वर में) मैं···मैं समझता हू, आपकी हालत को।···लेकिन अब क्या करूं मैं भी ? मेरी भी मजबूरी है ? कई दिनों से इस केस के कारण और कोई काम नहीं कर पा रहा। कल को किसी ने ऊपर शिकायत कर दी तो···

(दरवाज़े पर दस्तक की आवाज़। नरेन्द्र यन्त्रवत् उठ कर दरवाज़ा खोल देता है। हरिराम प्रवेश करता है।)

हरिराम : और आइडिया मास्टर जी, मिल गई आपकी फ़ाइल ?

अरे, मिलनी तो थी ही।.मेरा अंदाज़ा ठीक ही होता है, ज़्यादातर।

नरेन्द्र : (श्वास छोड़ते हुए) कहां मिली, हरिराम जी। यह सारे काग़ज़ देख डाले पर...

हरिराम : चलो, कोई बात नहीं। नहीं मिली तो मिल जाएगी। (बैठते हुए) अब हमारा काम भी तो शुरू कर दो। भई, ऐसे कब तक हाथ पर हाथ रख कर बैठे रहेंगे ? कुछ तो प्रबन्ध हो माल बेचने का, नहीं तो बस डूबे ही समझो।

नरेन्द्र : लेकिन, लाला जी, मेरी फ़ाइल...

हरिराम : मास्टर जी, फ़ाइल आपकी सो मानता हूं, बहुत ज़रूरी है मिलनी, लेकिन यह तो ठीक नहीं है कि आप हमारी मजबूरी ही न समझो। भई, हमने भी आख़िर धंधा तो चलाना ही है अपना। इस तरह तो बहुत मुश्किल है।

नरेन्द्र : (हताश स्वर में) मैं भी क्या करूं ? मेरा दिमाग़ ही चलना बन्द हो गया है, जब से यह चोरी हुई है (और देकर) बहुत कोशिश करता हूं पर नहीं...

हरिराम : (बात काटते हुए) कोशिश करो, मास्टर जी। कहीं ऐसा न हो फिर कि आपके रहते हमें विद्याधर के पास...

(दरवाज़े पर दस्तक की आवाज़)

नरेन्द्र : (दरवाज़े की ओर देख कर) कौन है ?

बिहारी : (बाहर से) मैं हूं, बिहारी। दरवाज़ा तो खोलो।

(नरेन्द्र उठकर दरवाज़ा खोलता है। बिहारी अन्दर आता है।)

हरिराम : (उठकर, हाथ जोड़कर) आओ जी, बिहारी जी, नमस्ते।

बिहारी : नमस्ते, नमस्ते (इंस्पेक्टर की ओर देखकर) कहो शंकर,

क्या हुआ नरेन्द्र की फ़ाइल का ? तुम पुलिस वाले बस चींटी की रफ़्तार को मात करते हो।

इंस्पेक्टर : (सिर झुका कर) जी, कोशिश तो कर रहा हूं, पर कुछ…

बिहारी : ठीक है, कोशिश करते रहो और ज़रा जल्दी करो। इस तरह तो यह दिन-ब-दिन उदास होता जाएगा। फिर हमारा काम कौन करेगा ? (नरेन्द्र से) हां, भई नरेन्द्र, परसों बहुत बड़ा जलसा है, (ज़ोर देकर) राजधानी में। कई एम० एल० ए० आ रहे हैं। मंत्री लोग भी आएंगे। ऐसा भाषण तैयार करो हमारे बारे में कि इस बार भी टिकट हमें ही मिले।

नरेन्द्र : (निराश स्वर में) जी, मैं कुछ परेशान हूं, इस फ़ाइल को लेकर…

बिहारी : अरे, रहने दो बहाने-बाज़ी को। मैं वैसे ही तुम्हें स्पेशल रेट देने को तैयार हूं। आऊं फिर कल सुबह, अभ्यास करने ?

नरेन्द्र : जी, मुझ से लिखा नहीं जाएगा ?

बिहारी : क्यों नहीं लिखा जाएगा ? कितनी बार तो लिख चुके हो। अब क्या हो गया ?

नरेन्द्र : (झिझकते हुए) जी…जी, वह फ़ाइल जो चोरी…

हरिराम : यही यह मुझ से भी कह रहे हैं। मैं कब से समझा रहा हूं कि मिल जाएगी। इंस्पेक्टर साहब तो ढूंढ ही रहे हैं। आप तो अपना काम देखो। इतने दिनों से ऐसे ही मेरा काम भी…

नरेन्द्र : लेकिन…

बिहारी : (एकदम) लेकिन क्या ? अगर नहीं मिली तो क्या ? क्या मिलेगा उस फ़ाइल से तुम्हें ? वैसे क्या कमी है-

तुम्हें ? हमारे लिए काम करते हो। अच्छे पैसे मिल जाते हैं। उस फ़ाइल ने कौन से लाखों कमा कर देने थे तुम्हें, जो उसके जाने से यूं पागल से हो रहे हो।

नरेन्द्र : (बिहारी की ओर देखकर, श्वास छोड़ते हुए) ठीक है बिहारी जी, मैं रात को ही कोशिश करूंगा आपका भाषण लिखने की। (हरिराम से) हरिराम जी, आपका काम भी कल नहीं तो परसों तक तो···

हरिराम : (उत्साहित होकर) यह हुई न बात। मुझे पता था, अपने मास्टर जी जरूर कुछ न कुछ करेंगे; हमारे लिए। इसीलिए तो हम शुरू से ही आपके पत्र के ग्राहक हैं।

(नरेन्द्र सिर झुका कर सुनता रहता है।)

बिहारी : (नरेन्द्र के पास जाकर, उसकी पीठ थपथपा कर) शाबाश, नरेन्द्र, मुझे पता है कि तुम इस बार भी मुझे टिकट दिलवाकर ही रहोगे। (मुस्करा कर) अच्छा, मैं चलता हूं। सुबह आऊंगा, दस बजे।

हरिराम : (उठते हुए) मैं भी चलूंगा ही। काम था कुछ घर पर ? हूं···हूं, वैसे एक बात आपसे भी करनी थी; बिहारी जी।

बिहारी : (बाहर जाते हुए) हां, हां, लाला बोलो क्या बात है ?

(दोनों बाहर चले जाते हैं। नरेन्द्र सिर झुका कर बैठा रहता है।)

इंस्पैक्टर : (कुछ समय बाद) अब मेरे लिए क्या हुक्म है ?

नरेन्द्र : (सिर उठा कर) जाइये, आप भी। ज़रूरत हुई तो फ़ोन करूंगा। (रुक कर) हां, ये सब कागज़ आप ले जाइये और जिस-जिसके हैं, उनको लौटा दीजिए।

(इंस्पैक्टर उठ कर, कागज़ इकट्ठे करता है।)

इंस्पैक्टर : मैं चलता हूं। फिर ज़रूरत पड़े तो याद कीजिए। नमस्ते !

नरेन्द्र : (उसे देखकर) नमस्ते !

(इंस्पैक्टर बाहर चला जाता है। नरेन्द्र शून्य में देखते हुए सोचता रहता है।)



दृश्य-11

(नरेन्द्र का शयन-कक्ष। वह पलंग पर अधलेटा है। पास ही छोटे से मेज पर टेबुल लैम्प है, जिसकी रोशनी नरेन्द्र के सामने पड़े कागज़ों पर पड़ रही है। नरेन्द्र कुछ लिखता है। फिर सोच कर कागज को नोच देता है। उसे फाड़ने की कोशिश करता है और उसके न फटने पर, झुंझला कर उसे नीचे फेंक देता है, जहां पहले ही कई नुचे और फटे कागज़ पड़े हैं।)

नरेन्द्र : (उठकर बैठते हुए, दर्शकों से) कैसे लिख सकता हूं मैं; बिहारी लाल के लिए भाषण, इस दिमाग़ी हालत में? (सोच कर) या फिर कोई साबुन बेचने का आइडिया; हरिराम के लिए? (ऊपर देखकर, सोचते हुए) इन लोगों ने बहुत कुछ दिया है मुझे। पैसा, मकान···और भी बहुत-कुछ। (चेहरे पर हाथ रखकर) मैं बेरोज़गार था, जब मैं हरिराम से मिला; जीवन में पहला समझौता किया मैंने; जब एम० ए० होते हुए भी उसका मुंशी बन गया। उसके बाद तो हर दिन कई-कई समझौते करने

पड़े। ये सब···पैसे के लिए···और पैसे के लिए ही, मैं बिहारी से भी जुड़ गया। पहले नारे लिखता था। बाद में उसने मुझे अपने भाषण लिखने का काम भी दे दिया। यहां तक; (सोच कर) खुद को धोखा दिया मैंने···और बाद में, इन लोगों को भी···इधर की उधर करके। बहुत कुछ, जो मुझ में था कभी, मर गया इस दौरान। (उठकर खड़ा हो जाता है और धीरे-धीरे आगे बढ़ता है।)

नरेन्द्र : (स्वप्निल हो, शून्य में देखते हुए) फिर भी एक चीज़ बच गई किसी तरह। वह था एक सपना, एक कवि के रूप में प्रसिद्ध होने का सपना। इस सपने से मेरा बंधन थी, वह फ़ाइल, जिसे देखकर मुझे यह आभास होता था कि कभी, किसी तरह, यह सपना सच हो जाएगा। (एकदम दर्शकों की ओर देख कर) यह सिर्फ़ मेरे ही साथ नहीं है; दुनिया में हर आदमी के पास एक ऐसा ही सपना होता है। वह उस सपने को सबसे छुपा कर, बचा कर रखना चाहता है और उसके सच होने की आशा करता रहता है। (रुक कर) पर हां, एक भय भी है या कहें कि इस सत्य की कटुता का आभास कि वह सपना कभी सच नहीं हो पाएगा। उन सब लोगों के सपने एक बहुत धीमी परन्तु निश्चित मृत्यु को प्राप्त हो रहे हैं। इस मृत्यु की निश्चितता उन्हें दुःख देती रहती है और उसका धीमापन उस दुःख में ऊपर उठने का समय देता है।

पर मैं, (दुःख से विह्वल स्वर में) जिसका स्वप्न एक आकस्मिक मौत मर गया है, क्या करूं? न तो उस स्वप्न को भूल पा ही रहा हूं और अगर उसे याद करता हूं तो···तो इस वास्तविक दुनिया में अपने अस्तित्व को ख़तरे में पाता हूं। यह···यह कैसी भयानक दुविधा है?

(सिर पकड़ कर नीचे ही बैठ जाता है।)

(कुछ क्षण बाद, धीरे-धीरे नरेन्द्र उठ कर खड़ा होता है।)

नरेन्द्र : (संयत होते हुए) अब दो रास्ते हैं मेरे सामने। मैं टूटे हुए सपने के दुःख में डूब जाऊं या···या फिर उसे भुला कर, वापिस उसी समझौते वाली राह पर आ जाऊं। (रुक कर) मुझे मालूम है कि आज नहीं तो कल अपने अस्तित्व के लिए, समझौता तो करना ही है। तो···तो फिर आज ही क्यों नहीं ? (सोच कर, दृढ़ स्वर में) हां, इस बार समझौता पूर्ण है। इसमें खुद को बहलाने वाला कोई सपना या यूं कहें धोखा नहीं है। (जाकर दोबारा लिखने बैठ जाता है। प्रकाश धीरे-धीरे मंद होकर लुप्त हो जाता है।)

(प्रकाश धीरे-धीरे लौटता है। नरेन्द्र मेज पर सिर रख कर सो रहा है। दरवाजे पर दस्तक की आवाज होती है। नरेन्द्र नहीं उठता। आवाज और तेजी से होती है। नरेन्द्र हड़बड़ा कर उठता है और दरवाजा खोलता है।)

नरेन्द्र : अरे शीला, तुम सुबह-सुबह कैसे लौट आई और वह भी अकेली ?

शीला : (अन्दर आते हुए) हां, बात ही ऐसी थी।

(अटैची बिस्तर पर रख कर खोलती है।)

शीला : तुम्हारी फ़ाइल मिल गई। यह देखो !

(अटैची में से फ़ाइल निकाल कर मेज पर रखती है।)

(नरेन्द्र एक टक फ़ाइल को देखता रहता है।)

शीला : सुन रहे हो ?

नरेन्द्र : ह ह···(सिर हिला कर) हां।

शीला : चुन्नू की शरारत थी। उसने उठा कर अपने बैग में छुपा ली थी। मैंने बहुत पीटा उसे। अब तुम उसे कुछ मत कहना। (रुक कर) इसीलिए साथ नहीं लाई। कहीं तुम

गुस्से में कुछ कर न ठो। (नरेन्द्र, जो जड़वत् बैठा है, उसे झिंझोड़ कर) सुन रहे हो? मैं क्या कह रही हूं? तुम्हें खुशी है न अपनी फ़ाइल मिलने की? अब कुछ मत कहना चुन्नू को। कल हम दोनों जाकर उसे और पप्पू को ले आएंगे। (नरेन्द्र को देख कर, जो अब भी वैसे ही बैठा है।) अरे! मेरी किसी बात का तो जवाब दो। यूं फ़ाइल को ही देखते रहोगे क्या?

(नरेन्द्र नजर उठा कर एक बार शीला को देखता है, फिर फ़ाइल को देखता है और फ़ाइल को उठा कर बिस्तर पर एक तरफ़ रख देता है।)

शीला : (परेशान होकर) कुछ कहो तो सही।

नरेन्द्र : (श्वास छोड़ कर, संयत स्वर में) ख़ैर ठीक है। जो हुआ, सो हुआ। (सोच कर) हां, अब जैसे कह रही हो, कर लेंगे।

शीला . (प्रसन्न होकर) यह अच्छा है। चुन्नू को भी कुछ मत कहना।

नरेन्द्र : हां, नहीं कहूंगा पर अभी तुम जल्दी से चाय बनाओ। थोड़ा काम पड़ा है बिहारी का। वह आता ही होगा।

शीला : (उठते हुए) जो, मैं अभी बना कर लाई। (चली जाती है।)

(नरेन्द्र उठता है। मुड़ कर फ़ाइल को देख, मुस्कराता है। फिर जाकर मेज के सामने बैठकर, लिखने लगता है।)

—: ● :—



आकाश सेठी

आकाश सेठी का जन्म 10 अक्तूबर, 1963 को दिल्ली के एक संभ्रान्त बौद्धिक परिवार में हुआ। पैतृक परिवेश साहित्यिक होने के कारण बचपन से ही साहित्य-सृजन में रूचि रही। बहुत छोटी उम्र में ही कविता और कहानियां लिखीं।

प्रारम्भिक शिक्षा कैम्ब्रिज फाऊंडेशन तथा सलवान पब्लिक स्कूल दिल्ली में हुई। बाद में इंजीनियरी में स्नातक बने और यह शिक्षा पंजाब विश्वविद्यालय के रासायनिक इंजीनियरिंग विभाग, चण्डीगढ़ में हुई। विश्वविद्यालय में आकाश सेठी की ख्याति एक कुशल अभिनेता, नाट्य-निर्देशक, नाट्य लेखक एवं व्यंग्यकार के रूप में रही। इस अल्पायु में ही सेठी दिल्ली के नाट्य-मंचों एवं समारोहों में विशेष ख्याति अर्जित कर रहे हैं। संप्रति श्री सेठी भारतीय तेल निगम में विमानन अधिकारी हैं। अपने कार्य के प्रति पूर्णनिष्ठा रखते हुए भी वे नाटक और अभिनय के लिए समर्पित हैं।

यह उनकी पहली नाट्य-कृति है और उनके कई नाटक विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में गत वर्षों में प्रकाशित हुए हैं।